मूल्य चार रुपये

आवरण प्रशान्त सेन
चित्र नारायण

०

प्रथम सम्करण, १९७०

०

प्रकाशक
नेशनल पब्लिशिंग हाउस
२/३५, अन्सारी रोड, दरियागंज, दिल्ली-६

मुद्रक शाहदरा प्रिंटिंग प्रेस, दिल्ली-३२

अनुवादक की तरफ से

विश्व की सभी भापाओ मे खोजें तो भी 'जादूगर कवीर' जैसे वाल-उपन्यास कम ही मिलेंगे। यदि यह उपन्यास किसी पश्चिमी देश मे लिखा गया होता तो निश्चय ही इसकी गणना विश्व के अमर वाल-साहित्य मे होने लगती। भारत मे वाल-साहित्य को अभी मान्यता ही कहा मिली है।

मूलत यह गुजराती उपन्यास है, जिसका अनुवाद भारत की प्राय सभी भापाओ मे हो चुका है। हिन्दी मे यह पहली वार पुस्तकाकार प्रकाशित हो रहा है। इसे जव 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' ने धारावाही प्रकाशन दिया था, तव चारो ओर वडी सनसनी मची थी। अव मैं इन पर आधारित एक हिन्दी फिल्म वनाने की दिशा मे कार्यरत हू।

इस उपन्यास के दिलचस्प ताने-वाने का जवाव नही। और इसका शैक्षणिक मूल्य इतना है कि इसे अखिल भारतीय स्तर पर शैक्षणिक पाठ्यक्रमो मे शामिल किया जाना चाहिए। भारत मे वाल-साहित्य का समुचित विकास तभी हो सकता है, जव उसे इसी पैमाने की विराट मान्यता मिले।

परिकथाओ, लोककथाओ के रूपान्तर करने को ही वाल-साहित्य का सर्जन समझने वाले लेखक 'जादूगर कवीर' पढकर देखें, तभी जानें कि वाल-साहित्य कहते किसे है।

जीव-जन्तुओ का परिचय देने वाले तीन मौलिक उपन्याम मैंने भी लिखे हैं— 'रूपा और लल्ली', 'पूपू' तया 'हाथी का शिकार'। उनमे क्रमश चीटियो, अष्टपद तथा हाथियो के रोमाचक दैनिक जीवन का चित्रण हुआ है। भारतीय वाल-साहित्य पर लेख लिखने से पहले विवेचको को ये उपन्यास पढने चाहिए। 'जादूगर कवीर' के लेखक के दो और उपन्यासो के हिन्दी अनुवाद मैंने किए हैं, जो शीघ्र ही पुस्तकाकार आएगे। इन्हें पढे विना भी भारतीय वाल-साहित्य का मूल्याकन असम्भव है।

हिन्दी के प्राय सभी युवक लेखक बाल-साहित्य का सर्जन करने से नाक-भौं सिकोडते हैं। यह कुछ इसी तरह की वात है कि वे स्वय अपने वच्चो को स्कूल-कालेज भेजने से नाक-भौं सिकोडे। उन्हे क्या कहा जाए ?

४-ए, अंधेरी हाउसिंग सोसायटी,
लल्लूभाई पार्क, वम्वई-५८ ए-एस

—मनहर चौहान

जादूगर कबीर

लता कहाँ ? दिलीप कहाँ ?

"लता, ओ लता ! दिलीप, ओ दिलीप !"

भोजन का समय हो गया था, फिर भी भाई-वहन न आए, तो माँ उन्हे पुकारने लगी। कही से जवाव न आया देखकर माँ ने और अधिक जोर से उन्हे पुकारा—"अरे, ओ दिलीप ! भाई-वहन को खेल-कूद मे भूख की भी याद नही रहती। रसोई ठडी हुई जा रही है।"

पिताजी ने आफिस जाने की तैयारी करते हुए कहा—"खिडकी से नीचे देखो न, यही कही खेलते होगे।"

माँ गुस्सा होकर वोली—"इन वच्चो से मैं परेशान हो गई हूँ। आपको तो उनकी फिक्र ही नही है। मेरी वे कुछ परवाह नही करते। आप मे मैं न जाने कव से कह रही हूँ कि उनके नाम स्कूल मे लिखवा दीजिए। वे यहाँ-वहाँ भटकना तो वन्द करे।"

फिर माँ ने अपना सिर खिडकी से वाहर निकाला और वच्चो को पुकारा—"अरे ओ दिलीप, लता ! कहाँ गए तुम दोनो ? यहाँ तो कोई भी नही दीखता।"

मुहल्ला बहुत बडा था और उसमे कई मकान थे। हर मकान मे कई फ्लैट थे, जिनमे किराएदार रहते थे। ये सब मकान बम्बई से पन्द्रह मील दूर स्थित पवई सरोवर के निकट थे। सुबह के दस बज गए थे और धूप तेज होती जा रही थी। स्कूल जाने लायक बच्चे स्कूल चले गए थे और छोटे बच्चे अपने-अपने घरो मे जा छिपे थे। कही दिलीप या लता नही थे।

पिताजी तो आफिस चले गए, लेकिन माँ को नीचे उतरना पडा। उसने हरेक घर का बरामदा देखा, भाई-बहन को पुकारा। कही से जवाब न आया। अब तक तो उसे लता और दिलीप पर गुस्सा आ रहा था, पर अब चिन्ता होने लगी। उसे याद आया कि सुबह नाश्ता करके वे जल्दी ही खेलने के लिए नीचे उतर गए थे और तभी से वापस नहीं आए थे। उसने जोर से चिल्लाकर कहा—"लता! दिलीप! कहाँ हो तुम दोनो? कोई तो जवाब दो!"

तभी 'हाऊ, हाऊ, हाऊ, हाऊ' करता हुआ एक शिकारी कुत्ता पास के मकान से बाहर दौडा। उसकी भयकर सूरत देखकर माँ चीख पडी। इसके साथ ही उस घर मे से आवाज आयी—"अरे, अरे, जैक! तू सबको डराता रहता है!" और तहेमीना ने बाहर निकलकर जैक के गले मे जजीर बाध दी। माँ को अब कुछ शान्ति मिली। तहेमीना ने माफी मागते हुए कहा—"बहन! जैक किसी को काटता नही है, पर सब को डराने मे इसे मजा आता है।"

लता की माँ रोनी-सी हो गई। बोली—"देखिए न, बहन! दिलीप और लता सुबह तडके ही खेलने चले गए थे,

अब तक उनका पता नही । मैं उन्हे खोज-खोजकर थक गई। रसोई भी ठडी हो गई है। अरे, यह सामने जो खिलौना पडा है वह तो लता का ही है। तब लता कहाँ चली गई ?"

तहेमीना इस घटना से बहुत दुखी हुई। उसने कहा—"बहन, जैक शिकारी कुत्ता है। गध पाकर वह किसी को भी खोज सकता है। मैंने अभी हाल मे ही उसे एक हजार रुपयो मे खरीदा है। हाँ, अभी आप क्या कह रही थी ? आपके लता और दिलीप गुम गए हैं और यह खिलौना उन्ही का है ? मेरा जैक इस खिलौने को सूंघकर उन्हे अभी खोज लेगा।"

माँ का डर काफूर हो गया। वह खुशी से बोल उठी—"खोज दीजिए न, बहन ! आपकी बडी कृपा होगी !"

तहेमीना ने शिकारी कुत्ते जैक को वह खिलौना सुंघाते हुए कहा—"जैक ! इसके मालिक दिलीप और लता को खोज निकाल।"

जैक उमग से भौका और खिलौना सूंघकर फिर से भौका। फिर वह जमीन सूंघता-सूंघता आगे दौडने लगा। उसके पीछे लता की माँ और तहेमीना भी दौडने लगी। तहेमीना ने कहा—"देखा, बहन ! वे मनमौजी खिलाडी बच्चे जिस रास्ते से गए हैं, उसे मेरे जैक ने खिलौने की गन्ध पर से ढूंढ निकाला है।"

एक मकान की सीढियो पर एक बिल्ली सोयी हुई थी। जैक को आता देख उसने जम्हाई ली। जैक सीधा जाकर उसे सूंघने लगा। बिल्ली ने एक छीक के साथ जैक को पजा मार दिया। तहेमीना तुरन्त बोल उठी—"देखा, बहन ! लता और दिलीप इस बिल्ली के साथ जरूर खेले होगे। उसके शरीर

पर बच्चो की गध है और जैक ने उसे पहचान लिया है।"

जैक जीना चढने लगा। वह दूसरी मजिल के एक दरवाजे के पास आकर रुका। दरवाज़ा बन्द था। वहाँ रहने वाले का नाम बाहर पीतल की पट्टी पर खुदा हुआ था—'प्रोफेसर खुशाल कबीर'।

तहेमीना बोली—"देखो, बहन ! दिलीप और लता ज़रूर प्रोफेसर कबीर के पास खेल रहे होंगे।"

तहेमीना ने बाहर लगा बिजली का बटन दबाया और भीतर घटी की मीठी झकार सुनाई दी। तुरन्त दरवाजा खुला और सफेद दाढी वाले एक वृद्ध पुरुष बाहर आए। उन्होने इन दोनो महिलाओ को देखते ही हाथ जोडकर नमस्कार किया। उसी समय जैक 'हाऊ-हाऊ' करता और फर्श सूंघता भीतर घुस गया। प्रोफेसर खुशाल कबीर चौंक उठे।

लता की माँ ने नमस्कार करते हुए कहा—"माफ कीजिएगा, प्रोफेसर साहब, लेकिन लता और दिलीप · "

प्रोफेसर साहब खुश होते हुए बीच मे ही बोल उठे—"दिलीप और लता ! आहा, वे बच्चे कितने प्यारे है, कितने सुन्दर ! कितने "

लता की माँ ने अधीर होकर पूछा—"हाँ, परन्तु वे यहा आए है न ?"

प्रोफेसर ने आश्चर्य मे कहा—"नही तो ! वे कल आए थे, रोज़ आते हैं। मेरे विज्ञान के प्रयोग देखते है, खेलते है, खाते-पीते है, मजे करते हैं, पर आज वे नही आए।"

लता की माँ का मुँह फक हो गया। तहेमीना बोल उठी—"मेरा जैक कभी गलत नही भौका करता। भौंकना हुआ वह



अन्दर घुसा है, तो निश्चय ही बच्चे भी अन्दर है।"

उसी समय भीतर से वस्तुओ के टूटने-फूटने और जैक के भौकने की आवाजें आयी। प्रोफेसर कबीर फिर चौंक उठे। तहेमीना को भी डर लगा कि जैक दूसरे के घर मे उपद्रव करेगा। जैक सभी कमरो मे घूमा। अन्त मे वह प्रोफेसर की प्रयोगशाला मे आकर जोर-जोर से भौकने और जमीन, मेज, कुर्सियाँ आदि सूंघने लगा।

प्रोफेसर कबीर एक प्रसिद्ध वैज्ञानिक थे। अपने घर मे वह अकेले रहते थे। उन्होने अपनी सारी उम्र विज्ञान के प्रयोग करने मे ही बिताई थी। उन्हे बच्चे बहुत प्यारे लगते थे। लता और दिलीप को कबीर चाचा पर बहुत प्रेम था और कबीर चाचा भी उन्हे बहुत चाहते थे। कबीर चाचा आज की घटना से बडे असमजस मे पड गए। उन्होने आज लता या दिलीप को देखा ही नही था, परन्तु लता की माँ कहती है कि बच्चे कबीर चाचा के घर मे हैं, तहेमीना भी यही कहती है और जैक भी यही दर्शाता है। फिर भी, घर मे कही भी लता या दिलीप नही है! कैसा आश्चर्य! उन्होने हर कमरे का कोना-कोना छान डाला, पर कही भी न लता है, न दिलीप। सब अचरज से एक-दूसरे की ओर ताकने लगे।

तभी जैक फिर से भौकने लगा। उसने प्रोफेसर की प्रयोग-शाला मे से दिलीप के जूते खोज निकाले और उन्हे उठाकर तहेमीना के कदमो पर रख दिया। फिर से वह ढूंढने लगा और लता की फ्राक तथा दिलीप की पैंट उठा लाया। माँ ने चीजें पहचान गई। निश्चय ही लता ने यही फ्राक और दिलीप ने यही पैंट पहनी थी। जूते भी दिलीप के ही हैं। यदि

दिलीप और लता आज यहाँ नही आए, तो ये वस्तुएँ कहाँ से आयी ? वह बोली—"कहिए, प्रोफेसर साहब, अब आप क्या कहते हैं ?"

प्रोफेसर कबीर बडे असमजस मे थे। लता की माँ और तहेमीना कुछ समझ न सकी कि बात क्या है। लता की माँ फिर बोली—"देखिए तो सही, वे नहा तो नही रहे ?"

स्नानघर मे भी बच्चे न थे। फिर से सब ने सारे घर मे ढूंढना शुरु किया, पर कुछ भी पता न चला।

जैक फिर भौंकने लगा। अब वह जमीन सूंघता हुआ खिडकी के पास गया और खिडकी की सलाखो पर पैर रखकर बाहर भौंकने लगा।

तहेमीना बोली—"अरे, जैक ! तू शिकारी कुत्ता है या बेवकूफ गधा। क्या वे बच्चे तितली की तरह खिडकी से उड गए हैं, जो तू बाहर देखकर भौंकता है ?"

"ऐं ! खिडकी से बाहर उड गए ?" प्रोफेसर कबीर का मुंह रुई-जैसा सफेद हो गया।

उसी समय तहेमीना बोली—"ओह ! कितनी गर्मी है ! गला सूखा जा रहा है। यहाँ इस मेज़ पर पानी रखा है क्या ?"

प्रोफेसर कबीर चीख उठे—"खबरदार ! आप जहाँ खडी हैं, वही खडी रहिए। एक कदम भी आगे न बढिएगा। कुत्ते को भी कसकर पकड रखिए, ज़रा भी न हिले। गजब हो गया है !"

प्रोफेसर ने अपनी जेब से एक आतशी शीशा निकाला और उसमे से नीचे देखते हुए वह मेज़ पर रखे उस कांच के प्याले की ओर गए। प्याले मे शरबत-जैसी कोई चीज़ थी।

उस प्याले को आधा भरा देखकर प्रोफेसर कबीर भय से काँपने लगे। उसी तरह आतशी शीशे से जमीन को देखते हुए उन्होने सावधानीपूर्वक कदम उठाए और प्याले को आलमारी मे बन्द कर दिया। फिर तहेमीना और लता की माँ से कहा—"मैं शीशे से जहाँ-जहाँ की जमीन देखूँ, केवल वही-वही कदम रखते हुए बाहर आ जाइए।"

लता की माँ और तहेमीना समझ न सकी कि यह सब क्या हो रहा है। प्रोफेसर का व्यवहार देखकर वे बहुत घबरा गईं। ज्यो ही वे घर से बाहर आयी, प्रोफेसर ने उनसे कहा—"बस! अब आप घर जाइए!"

और उन्होने भडाक से दरवाजा बन्द कर दिया।

घबराई और असमजस मे पडी हुई तहेमीना और लता की माँ कुछ भी न समझ सकी। लता की माँ रोने लगी। उसने पुलिस मे खबर कर दी। दोपहर को पुलिस ने प्रोफेसर के घर को घेर लिया। घर के दरवाजे बन्द थे। बाहर एक तख्ती लगी थी, जिस पर लिखा था—'मुझे खोजिएगा नही। मैं नही मिलूँगा।'

पुलिस ने दरवाजा तोड डाला और सब अन्दर घुसे। अन्दर कोई नही था।

प्रोफेसर कबीर अपने घर मे कहाँ गायब हो गए? लता और दिलीप कहाँ है? किसी की समझ मे कुछ न आया। लता के पिताजी को आफिस मे फोन करके बुलाया गया। वह आए, लेकिन वह भी क्या कर सकते थे!

सब आश्चर्य और चिन्ता मे डूब गए।

लता और दिलीप चीटी जितने छोटे

कबीर चाचा लता और दिलीप को बहुत प्यार करते थे। लता और दिलीप भी कबीर चाचा को बहुत चाहते थे। प्रोफेसर खुशाल कबीर रोज ही विज्ञान के नए-नए प्रयोग किया करते। उनके रसायन, काँच के प्याले, गिलास, नलियाँ, डिब्बें, पुस्तके, स्टोव, रग-बिरगे द्रव आदि सब क्या है, यह लता और दिलीप समझ नही सकते थे, परन्तु प्रोफेसर के प्रयोगो मे उन्हे बडा मजा आता था। प्रोफेसर फुरसत के समय उन्हे तरह-तरह की कहानियाँ सुनाते। वह उन्हे चाकलेट, पिपरमेण्ट, बिस्कुट, आइसक्रीम भी खिलाया करते। प्रोफेसर अकेले थे, उनकी शादी नही हुई थी। विज्ञान के प्रयोगो मे ही उन्होने अपनी सारी जवानी बिताई थी। अब कुछ-कुछ बूढे हो चले थे।

पिछले एक महीने से कबीर चाचा कोई नई खोज कर रहे थे। कल शाम से लता और दिलीप उनके प्रयोग देखने मे लीन थे। एक पात्र के रगीन पानी मे बार-बार रग बदल रहे थे। कभी उसमे से फेन निकलता, कभी धुआँ दिखाई पडता, कभी चिनगारियाँ भी पैदा होती। आखिर उस पात्र मे गुलाबी रग का कोई सुगन्धित पानी तैयार हुआ और कबीर चाचा खुशी के मारे तालियाँ पीटते हुए नाचने लगे। वह बोल उठे—"वाह, वाह! अब हाथी खरगोश बन जाएगा और खरगोश "

दिलीप को यह सुनकर बडा आश्चर्य हुआ। उसने पूछा—"क्यो, कबीर चाचा! आप हाथी को खरगोश बना देंगे?"

"चुप, चुप !" कबीर चाचा दोनो बच्चो के गालो को सहलाते हुए बोले—"आज नही बताऊँगा। रात हो गई है, घर पर तुम्हारी माँ राह देख रही होगी। जाओ, कल आना।"

बच्चो को घर जाने की इच्छा नही थी। उदास होकर उन्होने कहा—"अच्छी बात, चाचा। पर कल हमारे आने से पहले हाथी को खरगोश मत बनाइएगा। और खरगोश क्या बन जाएगा ?"

"कल, कल, कल ! आज कुछ नही बताऊँगा।"

लता और दिलीप को आखिर जाना पडा। उस रात उन्होने सपने मे कई जादुई चमत्कार देखे। अगले दिन तडके ही दूध पीकर वे कबीर चाचा के यहाँ पहुँच गए। चाचा घर न दीखे। शायद नहा-धोकर अभी वह तैयार नही हुए थे। बच्चे सीधे प्रयोगशाला मे गए। मेज पर जादुई शर्बत का वही प्याला ज्यो-का-त्यो रखा था। सूर्य की किरणो मे वह बडा ही खूबसूरत लग रहा था। लता ने काँच का ढक्कन हटा कर उसे सूँघा। खुश होकर वह बोल उठी—"ओहो ! दिलीप भैया ! कितनी मस्त सुगन्ध है ! हाथी और खरगोश दोनो को वह अच्छी लगेगी।"

दिलीप चौककर बोला—"अरे, दूर हट। वह जहर होगा, तो मर जाएगी।"

लता चौककर पीछे हट गई। पर ऐसा मस्त सुगन्धित शर्बत ज़हर हो सकता है, यह बात वह न मान सकी। उसने दलील की—"भैया, ज़हर तो कडवा होता है"

दिलीप डरकर बोल उठा—"चुप, चुप, चुप ! हम तु

नही जान सकते । कवीर चाचा आ जाएँगे, तो क्या कहेगे ?"

लता पीछे हट गई, पर उसकी आँखें रह-रहकर उस जादुई शर्वत पर ठहर जाती थी । खिडकी के पास एक सोफा रखा था । दिलीप उस पर चढकर वाहर देखने लगा । उसका ध्यान वाहर था, इस मौके का लाभ उठाकर लता ने फिर उस प्याले का ढक्कन खोला । अहा, कितना सुन्दर रग ! कितनी मस्त सुगन्ध ! ऐसा पदार्थ भला कभी जहर हो सकता है ? कवीर चाचा ने शायद हमारे लिए ही यह शर्वत वनाया है । अव लता अपना लालच न रोक सकी । उसने एक घूंट पिया और वोल उठी—"अहा-हा, भैया, कितना मीठा शर्वत है !"

दिलीप ने चौंककर पीछे देखा । वह वोला—"ऐं ! तूने शर्वत पी लिया ? अरे, वाप रे ! मर जाएगी तो ?"

लता हँस पडी—"भैया ! यह तो मजेदार शर्वत है । इतना अच्छा शर्वत मैंने आज तक नही चखा । अहा ! कितना अच्छा है !"

दिलीप भी ललचाया । वोला—"सचमुच ?"

लता ने कहा—"तू भी एक घूंट चखकर देख ले ।"

"कवीर चाचा आएँगे तो क्या कहेगे ?"

"कवीर चाचा ने जरूर यह शर्वत हमारे लिए ही वनाया है ।"

अव दिलीप भी अपना लालच न रोक सका । उसने भी एक घूंट पिया और कहा—"अहा ! कितना अच्छा है !"

फिर दोनो सोफे पर चढे और खिडकी से वाहर देखने लगे । लता खिडकी से नीचे देखकर वोली—"ओह ! कितनी

ऊँचाई ! हम यहाँ से नीचे कूदे तो ?”

दिलीप ने कहा—“तो मर जाएँ ! अगर हमारे पास तितली-जैसे पख होते तो यहाँ से छलाग लगाते और उडकर ही अपने घर जाते ।”

लता बोली—“माँ रसोई बना रही होती और हम खिडकी मे से होकर, उसके सामने, पीढे पर बैठ जाते ! कितना मजा आता ! क्यो, भैया ? भगवान ने हमे पख क्यो नही दिए ?”

उसी समय फुफुँदी[1] नामक चार पख और बडी-बडी आँखो वाला एक कीडा खिडकी के काँच पर जोर से टकराया और जमीन पर गिरकर बेहोश हो गया। दिलीप उसे देखकर बोला—“देख लता, फुफुँदी के चार पख है, हमारे एक भी नही ।”

उसी क्षण दिलीप के पैरो मे से उसके जूते निकलकर गिर गए। तभी लता बोली—“अरे ! मेरा फ्राक कैसे उतर गया ?”

दिलीप ने जवाब देना चाहा, पर इसके पहले ही उसकी कमीज और पैंट भी उतरकर गिर पडी। कमरे मे उसने चारो तरफ देखा। छत ऊपर चली गई, जमीन नीचे धस गई। पुस्तके मेज-जितनी बडी हो गई, मेज कमरे-जितनी हो गई और कमरा महल-जितना बडा हो गया। जमीन पर

१ ‘फुफुँदी’ को कई स्थानो मे ‘टिड्डी’ कहा जाता है, पर ‘टिड्डी’ एक सर्वथा भिन्न कीडा है, जो फसल का नुकसान पहुँचाता है। ‘फुफुँदी’ को अग्रेजी मे ‘ड्रैगन-फ्लाई’ कहते हैं। यह खेतो और मैदानो पर उडता रहता है। चित्र से तुम इसे पहचान सकते हो।

फुर्फुंदी नामक जो कीडा बेहोश पडा था, वह किसी जबर्दस्त हवाई-जहाज जितना बडा हो गया !

लता आश्चर्य मे डूब कर बोल उठी—"आहा ! यह क्या चमत्कार हुआ ? ये सब वस्तुएँ बडी कैसे हो गई ?"

दिलीप ने घबराहट मे कहा—"वस्तुएँ बडी नही हुई हैं। वे तो उतनी ही बडी हैं, लेकिन हम छोटे हो गए हैं। चीटी जितने छोटे !"

लता खिलखिलाकर हँस पडी—"आ-हा-हा-हा ! कितना मजा आया !"

दिलीप चिढ गया। बोला—"लता, यह हँसने की बात नही है। हम दोनो पर बडी भारी मुसीबत आ पडी है। याद है, कल कबीर चाचा क्या कह रहे थे ? उन्होने ऐसा जादुई शर्बत तैयार किया है, जिसे पीने से हाथी खरगोश जितना हो जाएगा। भूल से हमने वही जादुई शर्बत पी लिया है !"

"तो हम कितने बडे हो गए है ?" लता ने पूछा।

"चीटी जितने। या, हद-से-हद मकोडे जितने।"

"आहा ! कितनी मज़ेदार बात है !"

दिलीप फिर चिढा—"तू बिलकुल गवार है। इस मे हँसने और खुश होने की कोई बात नही है। यह तो रोने की बात है।"

लता ने कहा—"रोने की क्या जरूरत ? कबीर चाचा आकर हमे फिर से बडा कर देंगे।"

दिलीप ने जवाब दिया—"वह हमे देख ही न सकेगे। वह सोफा साफ करेंगे और सोफे की धूल के साथ हम भी बाहर उड जाएँगे, किसी के पैरो तले कुचल जाएँगे।"

ऊँचाई ! हम यहाँ से नीचे कूदे तो ?"

दिलीप ने कहा—"तो मर जाएँ ! अगर हमारे पास तितली-जैसे पख होते तो यहाँ से छलाग लगाते और उडकर ही अपने घर जाते ।"

लता वोली—"माँ रसोई वना रही होती और हम खिडकी मे से होकर, उसके सामने, पीढे पर वैठ जाते ! कितना मजा आता ! क्यो, भैया ? भगवान ने हमे पख क्यो नही दिए ?"

उसी समय फुफुंदी[1] नामक चार पख और वडी-वडी आँखो वाला एक कीडा खिडकी के काँच पर जोर से टकराया और जमीन पर गिरकर वेहोश हो गया। दिलीप उसे देखकर वोला—"देख लता, फुफूंदी के चार पख हैं, हमारे एक भी नही ।"

उसी क्षण दिलीप के पैरो मे से उसके जूते निकलकर गिर गए। तभी लता वोली—"अरे ! मेरा फ्राक कैसे उतर गया ?"

दिलीप ने जवाव देना चाहा, पर इसके पहले ही उसकी कमीज और पैंट भी उतरकर गिर पडी। कमरे मे उसने चारो तरफ देखा। छत ऊपर चली गई, ज़मीन नीचे धँस गई। पुस्तके मेज-जितनी वडी हो गईं, मेज कमरे-जितनी हो गई और कमरा महल-जितना वडा हो गया। ज़मीन पर

---

१ 'फुफुंदी' को कई स्थानो मे 'टिड्डी' कहा जाता है, पर 'टिड्डी' एक सर्वथा भिन्न कीडा है, जो फसल को नुकसान पहुँचाता है। 'फुफुंदी' को अग्रेजी मे 'ड्रेगन-फ्लाई' कहते हैं। यह खेतो और हरे मैदानो पर उडता रहता है। चित्र से तुम उसे पहचान सकते हो।

फुर्फुंदी नामक जो कीडा बेहोश पडा था, वह किसी जबर्दस्त हवाई-जहाज जितना बडा हो गया !

लता आश्चर्य मे डूब कर बोल उठी—"आहा ! यह क्या चमत्कार हुआ ? ये सब वस्तुएं बडी कैसे हो गई ?"

दिलीप ने घबराहट मे कहा—"वस्तुएँ बडी नही हुई है। वे तो उतनी ही बडी हैं, लेकिन हम छोटे हो गए है। चीटी जितने छोटे !"

लता खिलखिलाकर हँस पडी—"आ-हा-हा-हा ! कितना मजा आया !"

दिलीप चिढ गया। बोला—"लता, यह हँसने की बात नही है। हम दोनो पर बडी भारी मुसीबत आ पडी है। याद है, कल कबीर चाचा क्या कह रहे थे ? उन्होने ऐसा जादुई शर्बत तैयार किया है, जिसे पीने से हाथी खरगोश जितना हो जाएगा। भूल से हमने वही जादुई शर्बत पी लिया है !"

"तो हम कितने बडे हो गए हैं ?" लता ने पूछा।

"चीटी जितने। या, हद-से-हद मकोडे जितने !"

"आहा ! कितनी मजेदार बात है !"

दिलीप फिर चिढा—"तू बिलकुल गवार है। इस मे हँसने और खुश होने की कोई बात नही है। यह तो रोने की बात है।"

लता ने कहा—"रोने की क्या जरूरत ? कबीर चाचा आकर हमे फिर से बडा कर देंगे।"

दिलीप ने जवाब दिया—"वह हमे देख ही न सकेंगे। वह सोफा साफ करेंगे और सोफे की धूल के साथ हम भी बाहर उड जाएँगे, किसी के पैरो तले कुचल जाएँगे।"

लता बोली—"पर कबीर चाचा आएँगे तो हम चिल्ला-चिल्लाकर उन्हे पुकारेंगे।"

दिलीप ने दु:ख से एक साँस छोडी और कहा—"वह हमारी आवाज ही न सुन सकेंगे। चीटी की आवाज वह कैसे सुन सकते है? अब हम चीटी-जितने ही छोटे है!"

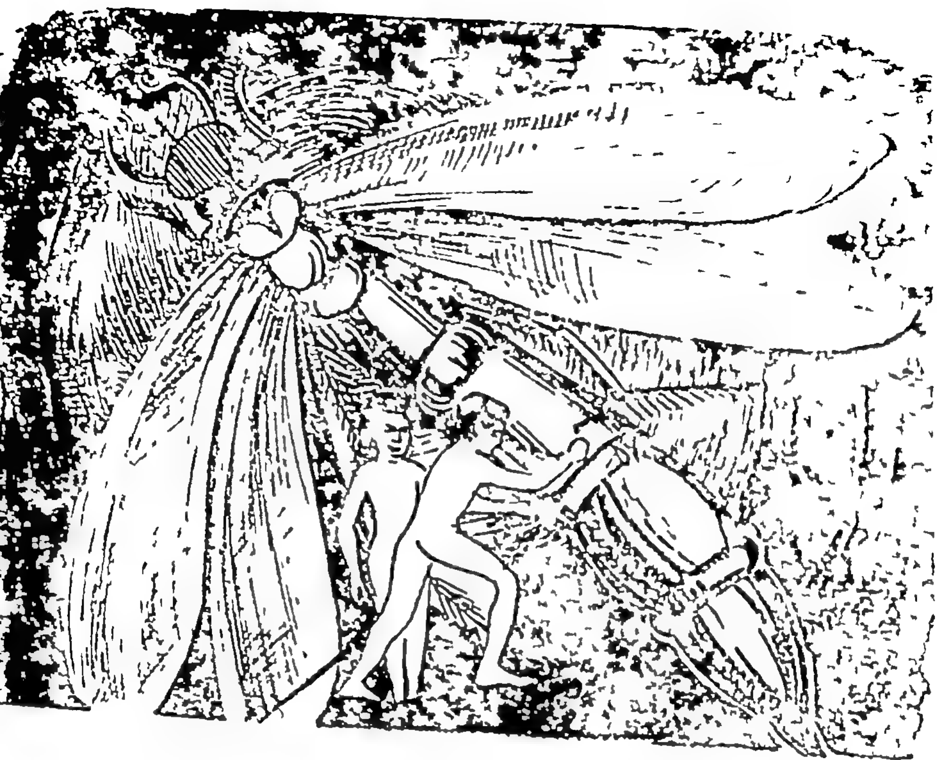
लता सोच मे पड गई। अचानक वह बोल उठी—"भैया! एक उपाय है। हम इस मरे हुए कीडे पर चढ जाते है। कबीर चाचा आएँगे तो इस फुफुंदी को जरूर उठाएँगे। जाँच करने के लिए वह इसे बारीकी से देखेंगे। तब हम जोरो से चिल्लाकर उनका ध्यान आकर्षित करेंगे। वह जाँच करते समय इस फुफुंदी को खुर्दबीन से भी देखेंगे।"

दिलीप बोल उठा—"हाँ-हाँ! यह ठीक है।"

दोनो भाई-बहन सोफे पर से सावधानीपूर्वक नीचे उतरे र फुर्फुदी के पैरो पर चढने लगे। फुफुंदी के पैर नारियल वृक्ष जैसे मालूम पड रहे थे। वहाँ से वे उसकी पीठ पर आ गए।

अचानक फुफुंदी हिलने और पख फडफडाने लगा। लता डर गई। वह बोल उठी—"अरे, भैया! यह राक्षस तो जिन्दा है। यह हमे उठाकर आकाश मे उड जाएगा तो?"

दिलीप कीडे की पीठ पर दौडकर सिर के पास पहुँचा। टापू-सी लगती उसकी आँखो पर उसने कई मुक्के मारे। फुफुंदी फिर बेहोश हो गया। दिलीप ने कहा—"राक्षस मेरे मुक्को से मर गया। कितनी बडी आँखे है इसकी! सिर से भी बडी और एक-एक मे हजारो पासे। अभ्रक जैसे इसके ये चार पख तो देख! मानो हवाई-जहाज के पख! और इसके पैर



तो पेड-जैसे हैं।"

उसी समय मानो तोपें छूट रही हो, ऐसे धमाके होने लगे और कबीर चाचा भीतर आए। ओह, कितने बडे दीख रहे थे वह! हिमालय जैसे! उन्हे देखकर भाई-बहन चीखने लगे—"कबीर चाचा! कबीर चाचा!"

पर कबीर चाचा न सुन सके। दिलीप और लता ने पूरी ताकत से प्रोफेसर को पुकारा—"कबीर चाचा! कबीर चाचा!"

गहराई से धीमी-धीमी आवाज़ आ रही हो और उसे सुनना हो, इस प्रकार प्रोफेसर ने अपने कान पर हाथ रखे। यह देख-

कर दिलीप और लता को साहस मिला। वे और अधिक ज़ोर से चिल्लाए—"यहाँ चाचा यहाँ! नीचे सोफे के पास। बायीं ओर"

उसी समय अचानक बेहोश फुफुंदी को होश आ गया। वह पंख फड़फड़ाने लगा। दूर फिंक जाने के डर से लता दिलीप से लिपट गई और दिलीप फुफुंदी से लिपट गया। वे दोनों फिर चिल्लाए—"चाचा"

पर उसी समय फुफुंदी लता और दिलीप को लेकर खिड़की से बाहर उड़ गया!

दिलीप पूरी ताकत से चीखा—"लता, बराबर पकड़े रहना।"

वे डर के मारे फुफुंदी से चिपके रहे।

आकाश से गिरे, तालाब में फसे!

ऊपर नीला आकाश था और नीचे गहरा पवई सरोवर। सामने ही 'विहार' नामक दूसरा सरोवर भी दिखाई दे रहा था। चाँदिवली और विहार की पर्वतमालाएँ सुन्दरता मे मानो एक-दूसरी से होड कर रही थी। दूर एक ओर साता क्रूज़ का हवाई-अड्डा दिखाई पड रहा था और दूसरी ओर अनायास ही अन्धेरी तक नज़र पहुँच जाती थी। डर की पहली कँपकँपी महसूस कर चुकने के बाद लता बोली—"यहाँ से पृथ्वी बडी सुन्दर लग रही है, है न भैया?"

लता नादान थी। दिलीप समझदार था। आसपास की इस सुन्दरता पर मोहित हो जाने के बजाय अब आगे क्या होगा, इसकी उसे अधिक चिन्ता थी। लेकिन फुफुंदी की उडने की कला पर मोहित हुए बिना वह भी न रह सका। अब उसे मालूम हुआ कि फुफुंदी के दो-दो की जोडियो मे चार पख क्यो होते हैं। जब फुफुंदी को ऊपर चढना होता था, तब वह अगले पख की अगली धारी ऊँची करता था। जब नीचे उतरना होता, तब वह पिछली धारी ऊँची कर देता। उसके पिछले दोनो पख इतनी तेजी से फडफडा रहे थे, मानो वे हवाई-जहाज के पखे ही हो। फुफुंदी के रग धूप मे चमक रहे थे। उसकी राक्षसी आँखो मे इतने अधिक पासे थे कि वह एक ही समय मे किसी भी दिशा मे देख सकता था।

लता बोली—"हवाई जहाज तो इस कीडे के सामने कुछ भी नही! इतने अच्छे हवाई-जहाज़ लोग क्यो नही बनाते?"

दिलीप ने जवाब दिया—"यदि मनुष्य ऐसे विमान बना सके, तो ईश्वर और मनुष्य मे फर्क ही क्या रह जाएगा?"

अचानक लता चीख पडी—"भैया! देखो, देखो! सामने से एक और हवाई-जहाज़ आ रहा है। वह हम से टकरा जाएगा।"

सूर्य के प्रकाश मे जामुनी, हरे और नीले रगो से चमकती हुई वह एक मक्खी थी। उसने फुफुंदी को देखकर भाग जाने के लिए हवा मे डुबकी लगाई, पर फुफुंदी उसे आसानी से छोडने वाला नही था। उसने भी उसके पीछे डुबकी लगाई। लता और दिलीप, गिर पडने के डर से, फुफुंदी के साथ और अधिक चिपक गए। मक्खी ने इधर-उधर कई गोते लगाए

पर फुफुंदी ने उसका पीछा न छोडा। आकाश मे भागते हवाई जहाज का दूसरा हवाई जहाज़ पीछा करे, उससे भी अधिक आश्चर्यजनक था यह दृश्य। आखिर फुफुंदी ने मक्खी को पकड ही लिया। उसके अगले दो पैर हाथ का काम कर रहे थे। मुंह के पास के दो नोकदार 'भालो' से उसने मक्खी के पख और पैर काटकर फेंक दिए, फिर गुफा-जैसे मुंह मे मक्खी को रखकर गायब कर दिया।

लता और दिलीप यह देखकर बुरी तरह डर गए। दिलीप ने कहा—"अच्छा हुआ कि हम इस राक्षस की पीठ पर बैठे हैं। यदि हम उसके मुंह मे आ जाएँ, तो एक कौर के बराबर भी न हो।"

यह बात सुनकर लता और भी डर गई।

फुफुंदी बहुत खाऊ राक्षस था। तितलियाँ, मक्खियाँ, उडने वाले गुबरैले, मधुमक्खियाँ आदि जो भी कीडे हवा मे उड रहे थे, उन्हें पकड-पकडकर वह खाता ही जा रहा था। उसका पेट भरता ही नही था।

पवन इतने वेग से बह रहा था कि बच्चे मुश्किल से एक-दूसरे की बातें सुन पाते थे। उन्हें हवा मे उड जाने का डर था। अचानक सामने से कोई भयकर कीडा आता दिखाई दिया। उसके तरह-तरह के रग धूप मे चमक रहे थे। वह एक गुबरैला कीडा था। उसे प्रकृति का ढालदार हवाई-जहाज कहा जा सकता है। तुमने गर्मी मे दीपक के आसपास ऐसे गुबरैले कीडो को देखा होगा। उनके शरीर पर चमकती हुई ढाल-सी होती है, जिसके नीचे अभ्रक-जैसे पख छिपे रहते हैं।

ढालदार गुबरैले और फुफुंदी मे खूंखार लडाई मच गई।

कभी फुर्फुदी ऊपर हो जाता तो कभी गुबरैला। लता और दिलीप इस भयकर युद्ध से बहुत ही घबरा गए। कभी वे औंधे सिर हो जाते, कभी करवटो पर पलट जाते और कभी बिल्कुल खडे हो जाते। कभी एकाएक धरती दीखती तो दूसरे क्षण ही आकाश दिखाई पडने लगता। ऐसे तुमुल युद्ध मे फुर्फुदी पर सवारी करना असम्भव हो गया। लता सन्तुलन न सम्हाल सकी। चीखकर वह नीचे गिरने ही वाली थी कि तभी दिलीप ने झपटकर उसका पैर पकड लिया। लता हवा मे लटकने लगी। वह चिल्लाई—"भैया! बचाओ!"

दिलीप ने घबराते हुए कहा—"मुझ से तेरा पैर भी छूटा जा रहा है। मेरा दूसरा हाथ भी छूट रहा है। मैं भी गिर रहा हूँ"

लता रो पडी—"भैया! भैया! बचाओ!"

दिलीप की आवाज़ भय से फट गई। वह बोला—"भगवान बचाएँगे ओ ओ ओह"

दिलीप का हाथ छूट गया। दोनो भाई-बहन आकाश से गिरने लगे।

लेकिन लता और दिलीप की तकदीर तेज़ थी। फुर्फुदी के शरीर से नीचे वे गिरे तो जरूर, लेकिन धरती पर नही, पवई सरोवर मे। भाई-बहन धब्ब से पानी मे गिरे और छब्ब से पानी उछला। गिरते ही वे सरोवर के जल मे न जाने कहाँ तक गहरे उतर गए। वे बहुत-सा पानी भी पी गए। फिर बडी मुश्किल मे वे पानी की सतह पर आए। थू-थू करके उन्होने बहुत-सा पानी अपने मुंह से निकाला, तब जरा उन्हे होश-सा आया। दिलीप ने कहा—"बहन, किनारा सामने ही

है। हमे किसी तरह वहाँ पहुँच जाना चाहिए।"

"इतनी दूर तक हम कैसे तैर सकेंगे?" असहाय आवाज़ मे लता ने पूछा।

"हमे किसी भी तरह किनारे पहुँचना ही होगा। तू जब थक जाए तो मेरे कन्धे पकड लेना। हिम्मत न हारना। हम जरूर किनारे पहुँच जाएँगे।"

भाई-बहन किनारे की ओर तैरने लगे। पानी मे बेतहाशा काई और घास उगी हुई थी। चीटी जितने छोटे लता और दिलीप के लिए तो वह काई और घास भी ताड जैसी विशाल थी।

"अरे, बाप रे!" दिलीप भय से चीखा—"यह राक्षस कौन है?"

"हाय, मैं मर गई!" लता भी भय से चीख पडी।

कटार जैसी सूंड वाला एक कीडा पानी की सतह पर फिसलता हुआ दिलीप और लता की ओर आ रहा था। तुम ने गढो, छोटे तालाबो, कुओ आदि की सतह पर इधर-से-उधर फिसलते हुए एक कीड को देखा होगा। अग्रेजी मे इसे वाटर-स्केटर कहते हैं। उसके पख होते है, पर दिन मे वह उडता नही है। हम उसे 'फिसलू' कहेगे।

काल-जैसे इस राक्षस को अपनी ओर आता देखकर दिलीप ने लता का हाथ पकडकर झट से पानी मे डुबकी लगा दी। उन्होने यह अच्छा ही किया, वरना वह राक्षस अपनी कटार जैसी सूंड से उन्हें छेद देता। थोडी देर बाद जब वे दोनो वापस सतह पर आए, तो 'फिसलू' राक्षस वहाँ नही था।

दिलीप बोल उठा—"बच गए। चल, अब किनारे पहुँचे।"

पर एक नही, अनेक मुसीबतें इन भाई-बहन की राह देख रही थी। वे अभी थोडी दूर ही गए होगे कि उनके पैरो मे एक जाल फंस गया। धीरे-धीरे वे उस जाल मे फँसते ही गए, फँसते ही गए। उसमे से छूटने के लिए उन्होने अपनी सारी शक्ति लगा दी, पर जितना ही वे छूटने का प्रयत्न करते, उतने ही उलझते जाते।

तभी न जाने कहाॅ से एक विकराल काला आकार उनके सामने आकर खडा हो गया। स्वय अपने शरीर से भी कई गुना लम्बे उसके आठ पैर थे। पैर और शरीर पर काँटो जैसे बाल थे। आठ डरावनी आँखें थी। उसका मुँह गुफा-जैसा था और जबडे थे सडसी जैसे। उफ! कैसा विकराल राक्षस! कौन था वह? वह पानी का मकडा था। उसके जाल मे फँसे बेचारे भाई-बहन भय से काँपने लगे।

तभी मकडे ने आगे बढकर अपने पैरो से उन्हें पकड लिया। भय से चीखकर दोनो भाई-बहन बेहोश हो गए।

पानी का मकडा सरकस के तम्बू जैसा एक घर बनाता है। घर पानी के अन्दर होता है। उसके खिडकी-दरवाजे नही होते। मकडे को इस घर मे साॅस लेने के लिए हवा तो चाहिए न? अत वह बुलबुलो के रूप मे बाहर से हवा ले जाकर इस घर मे इकट्ठी कर लेता है। यह तम्बू घटीनुमा होता है। घटी, जो औंधी लटकी हो। इसीलिए पानी के भीतर होने पर भी उसमे पानी नही होता। लता और दिलीप को मकडा अपने ऐसे ही घटीनुमा घर मे ले गया।

मौत के शिकंजे में

लता और दिलीप को जब होश आया, तब सब जगह अन्धकार छा चुका था। वे जाल से बँधे हुए थे। मकडे के उस तम्बू मे वे दोनो लटक रहे थे। पहले दिलीप होश मे आया। उसने लता को कराहते हुए सुना।

"बहन!"

"भैया! हम कहाँ है?" लता रोनी-सी होकर बोली।

"चुप! धीरे बोल, नीचे वह राक्षस चहलकदमी करता मालूम पडता है।"

"कौन राक्षस?"

"वही मकडा।"

"उसने हमे यहाँ इस तरह लटका क्यो रखा है?"

"मैं नही जानता।"

बेचारे भोले बच्चे! उन्हे क्या मालूम था कि मकडे ने उन्हे खा जाने के लिए ही यहाँ लटका रखा है। किसी ने मकडे को खलल पहुँचाई है, इसी कारण भाई-बहन अब तक जिन्दा बचे हुए हैं।

मकडे को चैन नही था। वह पानी मे और तम्बू की दीवारो पर घूम रहा था। बार-बार वह रुक जाता और किसी की आहट लेने लगता। सहसा दिलीप को ऐसा लगा, मानो तम्बू की दीवार को कोई बाहर से ठोक रहा है। धीरे-धीरे वह आवाज बढती जा रही थी। मकडा उत्तेजित होकर टहल रहा था। अब समूचा घर नीव से हचमचा उठा था। जाले मे लटके भाई-बहन उछलकर इधर-उधर टकरा रहे थे।

आखिर पानी के नीचे की दीवार भेद कर एक दूसरा मकडा अन्दर आता दिखाई दिया। पहले तो आठ-आठ आँखो से दोनो मकडो ने एक-दूसरे को देखा। फिर धीरे-धीरे नजदीक आकर एक-दूसरे को छुआ। अचानक दोनो मल्लयुद्ध करने लगे। तम्बू हृचमचा गया, पानी मे लहरे उठने लगी। आठ-आठ पैरो से दोनो मकडे एक-दूसरे पर प्रहार करते, काटते, चबाते, मुक्के मारते, मसलते। दोनो राक्षसो का तुमुल-युद्ध देखकर लता और दिलीप ऊपर लटके हुए कॉप उठे। झटको से वे इधर-उधर टकरा रहे थे। लडाई मे दोनो मकडो के लम्बे-लम्बे पैर टूटने लगे। एक का पैर तो उछलकर जाले मे अटक गया। ऐसी भयकर लडाई देखकर भाई-बहन की साँस रुकने लगी। मकडो की लडाई से पानी का मथन हो रहा था और तम्बू इस तरह उछल रहा था, मानो भयानक भूकम्प हो रहा हो।

आखिर युद्ध समाप्त हो गया। उनके आठ-आठ पैरो मे से मुश्किल से दो-दो, तीन-तीन पैर बच रहे थे। उनके शरीरो की हलचल रुक गई थी।

दिलीप ने कहा—"मालूम होता है, वे आपस मे लडकर मर गए हैं।"

"उफ !" लता ने छुटकारे की साँस ली। उन्होने सोचा कि अब यहा से जल्दी भाग जाना चाहिए। कही फिर से कोई तीसरा राक्षस न आ टपके।

पहले दिलीप जोर लगाकर जाल मे से छूट गया। फिर उसने लता को छूटने मे मदद की। नीचे पानी की सतह पर दोनो राक्षस मरकर तैर रहे थे। दिलीप ऊपर से पानी मे कूदा।

पानी के छींटे ऊपर उड़े। लता डरकर चीख उठी। जब दिलीप वापस पानी की सतह पर आया, तो लता ने कहा—"भैया! ऊपर चढ़ जाइए। वे तो जिन्दा मालूम पड़ते हैं।"

पर दिलीप बहादुर था। उसने एक मकड़े के पास जाकर उसके पेट पर मुक्का मारा। पेट ढोलक की तरह बजा। मकड़ा जरा-भी हिला-डुला नही। यह देखकर दिलीप उसके ऊपर चढ़ बैठा।

"कूद जा!" दिलीप ने कहा।

"ऊँहूँ!" मुझे डर लगता है," लता ने नीचे देखकर कहा।

"तो क्या वही बैठी रहेगी? तीसरा मकड़ा आएगा और हमे खा जाएगा।"

"उई, माँ," कहकर लता ने भय से आँखें बन्द कर ली। वह नीचे कूद पड़ी। कूदते ही वह पत्थर की तरह पानी मे उतर गई और फिर थू-थू करती हुई ऊपर आकर अपने भाई से लिपट गई। जब दिलीप उसे मरे हुए राक्षस के शरीर पर चढ़ाने लगा, तब वह भय से चीख उठी—"बाप रे! यह तो जिन्दा है!"

"बेवकूफी मत कर!" दिलीप ने कुछ गुस्से से कहा—"तू यही बैठ, मैं अभी गुफा से बाहर निकलने का रास्ता खोजकर आता हूँ।"

लता को जब यह विश्वास हो गया कि राक्षस मरा हुआ है, तो उसने राक्षस के शरीर पर चढ़कर उसे खूब मुक्के मारे। दिलीप ने बाहर निकलने का रास्ता खोजने के लिए डुबकी लगा दी। जब कुछ देर तक वह नही लौटा तो लता डर गई



ग्रौर भय से चीख उठी, "मैं · या· "

दिलीप ऊपर ग्राया । उसने चिढकर पूछा—"क्या है ?"

तभी लता को मालूम हुग्रा कि उसकी साँस घुट रही है।

"मैं साँस नही ले सक रही हूँ" वह बोली।

दिलीप को भी ग्रब जैसे होश ग्राया । उनका भी दम घुट रहा था। तुम पूछोगे कि उनका दम क्यो घुटने लगा ? मैंने तुम से पहले ही कहा था कि मकडे के घर मे दरवाजे-खिडकियाँ नही होती ग्रौर वह पानी के भीतर बना होता है । इसलिए उसके घर मे हवा ग्राने का कोई मार्ग नही होता । तुम प्रश्न करोगे कि क्या मकडा पानी के भीतर हवा के बिना जिन्दा रहता है ?

नही ! पानी के मकडे के शरीर पर ग्रसख्य बाल होते हैं। जब वह पानी के बाहर रहता है, तब हवा उन बालो मे ग्रटक जाती है। जब वह ग्रचानक पानी मे डुबकी लगा देता है, तब बालो मे कैद हवा के ग्रासपास पानी लिपट जाता है। हवा बुलबुलो के रूप मे मकडे के बालो मे फँसी रह जाती है । घर के भीतर ग्राकर यह मकडा ग्रपने शरीर को झाडता है । झटके से वायु उन बालो मे से निकलकर घटोनुमा घर मे जमा हो जाती है ।

इसी तरह इकट्ठी की गई हवा मे लता ग्रौर दिलीप साँस ले रहे थे। ग्रब हवा समाप्त होने लगी थी ग्रौर उनका दम घुट रहा था । उनके कान झनझना रहे थे । पर्याप्त वायु पाने के लिए वे हाँफ रहे थे । क्या इस ग्रधेरी गुफा मे ही उन्हे बिना हवा के घुटकर मर जाना होगा ? लता घबरा गई, पर दिलीप मे हिम्मत थी—उसने ग्रभी भी ग्राशा नही छोडी थी।

लता और दिलीप की खोज

लता और दिलीप खो गए, इसका दोष प्रोफेसर कबीर पर लगाकर जिस समय पुलिस उनके मकान की तलाशी ले रही थी, उस समय प्रोफेसर कबीर पवई सरोवर के किनारे एक हाथ मे छोटी-सी पेटी और दूसरे हाथ मे लाल झण्डी लेकर एक टीले पर खडे थे। उनकी दाढी मे जाले और घास-फूस लगे हुए थे। उनके कपडे कीचड से सने थे और हैट टूट गया था।

पवई सरोवर के पानी मे कमल खिले हुए थे। मन्द-मन्द समीर वह रहा था। पानी मे उठती लहरो के कारण कमल डोल रहे थे। लम्बी अँगुलियो वाले पीहो पक्षी कमल के पत्तो पर कीडे पकडने के लिए दौड लगा रहे थे। पानी मे मछलियाँ फिसल रही थी। पानी का एक साँप उडते कीडो को पकडने के लिए अपना मुंह पानी से बाहर निकालकर बिना हिले-डुले पडा था। वह बिलकुल ऐसा दीखता था, मानो किसी कमल की कली और उसकी डण्डी हो। तुम देखते तो तुम भी उसे चुनने के लिए हाथ बढाए बिना न रहते!

'यही जगह अच्छी है', प्रोफेसर ने मन-ही-मन कहा। उन्होने उस छोटी पेटी को जमीन मे गाड दिया। निशानी के लिए उसके पास लाल झण्डी मजबूती से खडी कर दी। झण्डी को दूर से ही देखा जा सकता था।

इतना काम करके प्रोफेसर कबीर ने अपनी जेब मे से एक शीशी निकाली। उस शीशी मे वही जादुई शर्बत था, जिसे दिलीप और लता ने भूल से पी लिया था। झाग से भरे उस

शर्बत को देखकर प्रोफेसर ने दुःख से एक निःश्वास छोडा, फिर उसे गटगट पी गए। इसके बाद उन्होने तुरन्त अपने कपडे उतारकर घास मे फेंक दिए और शर्बत की खाली शीशी सरोवर मे डाल दी। फिर वह धीरे-धीरे टीले पर से नीचे उतरे। पानी के किनारे तक बस पहुँचे ही थे कि वह भी दिलीप और लता की तरह, चींटी जितने तो नही, लेकिन मकोडे जितने जरूर बन गए! आसपास के झाड उन्हे कुतुब मीनार जैसे, पवई और विहार की टेकरियाँ हिमालय जैसी और घास के कोमल फुनगे ताड जैसे लम्बे दिखाई देने लगे। पवई का नन्हा-सा सरोवर उनके सामने प्रशान्त महासागर जैसा लहरा रहा था। उन्हे ऐसा लगा मानो वह अपनी प्रयोग-शाला मे बैठकर आतशी शीशे से सारी सृष्टि को देख रहे हो।

इस भयानक जगल मे मकोडे जितने प्रोफेसर, चींटी जितने लता और दिलीप की खोज मे आगे बढे। 'वे भोले बच्चे कहाँ गए होगे यहाँ तो हर कदम पर खतरा है', यही सोचते-सोचते वह थोडी ही देर मे मकडो की अजीब दुनिया मे जा पहुँचे। मकडे बिच्छू के ही सौतेले भाई है। वे कुटुम्ब या टोली बनाकर नही रहते। वे बहुत स्वार्थी होते हैं और जिस छोटे कीडे को देखते हैं, उसे ही अपनी खुराक समझते हैं। इसी से जब दो मकडो की आपस मे भेंट होती है, तो एक मकडा दूसरे को मारकर उस का खून पी जाता है।

टीले के किनारे वह तम्बू-जैसी कौन-सी चीज है? अरे, यह तो मकडे का जाला है। जिस प्रकार साँप के बच्चे अपनी केंचुल उतारते हैं, उसी प्रकार मकडे के बच्चे अपनी खाल उतार रहे थे।

प्रोफेसर बोल उठे—"हु। मैं तुम्हे पहचानता हूँ। तुम्हे जन्म देकर तुम्हारे माँ-बाप मर जाते है। अब यदि मौका मिलेगा, तो तुम भी एक-दूसरे को फाडकर खा जाओगे। कैसे खूंखार बन्धु हो तुम भी!"

प्रोफेसर की बात सच थी। खाल उतरते ही इन बच्चो को ऐसी भूख लगती है कि वे एक-दूसरे को फाडकर खा जाएँ। पर यदि हर बार ऐसा हो, तो ससार मे एक भी मकडा जिन्दा न बचे। अत खाल उतरते ही बच्चो को सब से पहली प्रेरणा भाग जाने की होती है। प्रोफेसर ने उन्हे भागते देखा। एक बच्चा दौडकर ऊँचे टीले की चोटी पर चढा। उसने अपने शरीर के पिछले छोर से रेशम का एक गीला 'धागा' निकाला। धागा हवा मे उडा और पवन के सपाटे के साथ मकडे का बच्चा भी उस धागे पर सवार होकर उड गया।

"वाह! वाह!' प्रोफेसर बोल उठे, 'बिना पख के ही मीलो दूर तक उड जाने की कला मैंने अपनी आँखो से आज देखी। सान्ताक्रूज़ के एरोड्रोम पर एक पायलट ने मुझसे जो कहा था, वह मुझे अब याद आ रहा है। उसने मकडे का ऐसा रेशमी धागा पाँच मील की ऊँचाई पर देखा था। एक और पायलट ने तो दस मील ऊँचे तक ऐसे धागे को उडते देखा था। इतना ही नही, एक कप्तान ने तो किनारे से सैकडो मील दूर, समुद्र के बीच मे एक मकडे को धागे पर सवार होकर उडते देखा था।"

प्रोफेसर और आगे चले। वे थोडी ही दूर गए थे कि रास्ते मे ताड जितने ऊँचे घास के दो फुनगो के बीच मे गुब्बारे-सा जाला बुनकर, भैसे जैसा एक मकडा बैठा दिखाई

दिया। वह शिकार की राह देख रहा था। प्रोफेसर ने अचम्भे से उसकी ओर देखा और हँसकर बोल उठे—"मेहरबान, आप को मैं गुड-मार्निंग, सलामवालेकुम या नमस्ते कहने के लिए तैयार हूँ, पर आपके जाले को हाथ लगाने के लिए तैयार नही। यदि मैने उसे स्पर्श किया तो उसी मे चिपककर रह जाऊँगा और आप मेरा खून चूस लेगे।"

तभी ऐसा शोर होने लगा, जैसे हवाई जहाज आ रहा हो। एक मक्खी उस जाले मे आकर फँस गई। जाले मे पडते ही कीडा उसमे चिपक जाता है, क्योकि जाले के धागो पर जगह-जगह गोद-सी चीज़ लगी होती है। जिस तरह शिकारी जाल की रस्सी हाथ मे पकडकर दूर बैठा रहता है, उसी तरह मकडा भी जाल के बीच मे बैठा रहता है। उसके विशाल जाल मे कहाँ क्या-क्या हो रहा है, इसकी खबर उसके पास पैरो के नीचे के एक पतले तार द्वारा आती रहती है। मक्खी ज्यो-ज्यो जाल से छूटने के लिए तडपती गई, त्यो-त्यो वह उसमे और भी अधिक फँसती गई। मकडे को जैसे ही तार से शिकार फँसने का समाचार मिला, वह दौडा-दौडा आया। उसने मक्खी के आसपास और भी घना जाला पूर दिया। उसके बाद उसने मक्खी को जोर से पकडा और उसे काटकर मार डाला। फिर वह उसका खून पी गया और जो अस्थिपजर बचा, उसे जाले से नीचे गिरा दिया। इसके बाद वह जाले के टूटे हुए धागो को ठीक करने लगा।

उसी समय फिर ऐसी गडगडाहट सुनाई दी, जैसे कोई विशाल बमवर्षक हवाई-जहाज आ रहा हो। प्रोफेसर ने ऊपर देखा तो एक भौरा धव्व से गिरा और जाले मे उलझ

गया । जाला हचमचा उठा। मकडा दौडकर उसकी ओर गया, पर भौरे ने भाले की तरह अपना डक वढा दिया । मकडा छिटककर, दूसरी ओर से हमला करने लगा। वह जिधर से भी हमला करता, भौरा उधर ही अपना भाले जैसा डक मारने लगता। अन्त मे मकडे ने समझ लिया कि 'अगूर' खट्टा है । भौंरे की उछलकूद से मकडे का घर टूटने और ढहने लगा था । मकडा चतुर था । उसने वहुत चतुराई से भौरे के आसपास का जाला काटकर अलग कर दिया। इससे रेशमी धागो मे लिपटा और उलझा हुआ भौरा नीचे गहरी खाई मे जा गिरा ।

"वाह ! यह तो वहुत अच्छा रहा !" प्रोफेसर को सहसा एक उपाय सूझ गया था । उन्हे कुछ कपडो और किसी हथियार की जरुरत थी। उन्होने खाई के किनारे जाकर देखा। भौंरा नीचे तडप रहा था । वही किनारे कुछ पत्थर पडे थे । प्रोफेसर कवीर ने अपना सारा वल लगाकर खाई मे पडे भौरे पर एक पत्थर गिरा दिया । पत्थर से भौंरा कुचल गया । परिश्रम से थके हुए कवीर चाचा ने यह देखकर आनन्द से जयनाद किया ।

फिर वह नीचे खाई मे उतरे और जगली भैसे जैसे दीखते उस भौरे के पास गए। भौरा अन्तिम वार तडपा और मर गया। ओह, कैसा भयकर था वह । उसका डक ऐसा लग रहा था जैसे कोई लम्बा खजर हो। प्रोफेसर ने एक घटे की मेहनत के वाद वह डक उसके शरीर से निकाल लिया ।

कवीर चाचा आनन्द से नाच उठे और वोले—"इस भयकर जगल मे अपनी रक्षा के लिए मुझे हथियार मि

और·· हाँ! मैंने तो एक भी कपडा नही पहना है और यह राक्षस रेशमी सूट पहनकर पडा हुआ है।"

भौंरे के शरीर पर मकडे के जाले का जो रेशम लिपटा हुआ था, उसे प्रोफेसर कबीर उखाडने और उसकी चिकनाहट साफ करके अपने शरीर पर लपेटने लगे। कन्धो से घुटनो तक रेशम से सज्जित होने के बाद वे खुश होकर कहने लगे—"विलायत-पास दर्जी द्वारा सिले सूट जैसा तो यह सूट नही है, पर इससे अच्छा सूट फिलहाल कही नही मिलेगा।"

प्रोफेसर खुश होते और गाते हुए खाई से बाहर निकले। ऊपर आठ आँखो वाला मकडा नया रेशम कात कर अपने जाले को सुधार रहा था। उसकी चतुराई देखकर वे मन-ही-मन उसकी प्रशसा करने लगे। उन्होने देखा कि मकडे के शरीर के निचले भाग मे कुछ छिद्र हैं। उन्ही मे से वह मकडा रेशम के तार बना-बनाकर निकाल रहा था। प्रोफेसर सोचने लगे कि क्या मनुष्य भी ऐसा बारीक तार कभी कात सकेगा?

घास के जगल मे प्रोफेसर कबीर आगे बढे। ऊपर आकाश मे युद्ध के विमानो जैसे फुफुंदी जूझ रहे थे। घास पर बैठे हुए 'रामसुग्गे' बडे भयकर लग रहे थे। फूलो पर हेलीकाप्टर जैसी मधुमक्खियाँ झूम रही थी। धरती पर गेंडे जैसे गुबरैले कीडे टहल रहे थे। प्रोफेसर को पैरो मे उठा लें, ऐसे सुन्दर रगबिरगे पतगे हवा मे पख फडफडा रहे थे।

चलते-चलते प्रोफेसर सरोवर के किनारे आए। वहाँ पानी की एक लीक बह रही थी, जिसे प्रोफेसर कूदकर पार कर गए। कूदकर जहाँ वह गिरे, वहाँ की जमीन अचानक धस गई और वह कुएँ जैसी एक गुफा मे कैद हो गए। ऊपर

आकाश दीख रहा था, पर भीतर अंधेरा था। प्रोफेसर को कुछ भय-सा मालूम हुआ। वह झटपट ऊपर चढने लगे, पर उसी समय किसी की कठोर सूंड भीतर आयी। कौन है यह ? मध्ययुग के योद्धा की तरह उसने ढाल पहन रखी है, पर उसका काम है गोबर के लड्डू बनाना। वह कीडा गोबर का एक लड्डू लुढकाता हुआ लाया, जिसे उसने गुफा के मुँह पर डाल दिया। गुफा बन्द हो गई। प्रोफेसर घबरा गए। उन्होने गोले को वहाँ से हटाने के लिए सारी ताकत लगा दी, पर वह गुबरैला कीडा उस गोले को अन्दर धकेल रहा था। ऊपर से जो मिट्टी, ककड और गोबर गिरा, उसके साथ कबीर चाचा भी नीचे जा गिरे।

प्रोफेसर ने शरीर पर से धूल झाडी और अंधेरे मे टक-टकी लगाकर देखा। कुछ भी न दिखाई दिया। उसी समय सरसराहट-सी हुई और उन्हे ऐसा लगा जैसे कोई जन्तु धीरे-धीरे उनके सामने आ रहा है।

भय से फटी हुई आवाज से प्रोफेसर चीखे—'खबरदार ! कौन है ?'

घोर अन्धकार मे कोई भयकर दुश्मन प्रोफेसर कबीर की ओर बढ रहा है। भागने का कोई रास्ता नही है। अब क्या होगा ? हे भगवान् !

टिड्डी की करामात

देखा । सामने कोई काली आकृति पडी थी । उसकी दो लम्बी मूँछे थी । उसके पैरो पर काँटे थे । उसके दो पख थे जो पीठ पर सजोकर रखे हुए थे । उसके मुँह पर ढाल-सी थी । उसके पजे किसान के हसिये जैसे मालूम पड रहे थे । कोई और समय होता तो प्रोफेसर कबीर उससे कहते—'जय हिंद ! माफ कीजिएगा मेहरबान, मैंने आपको पहचाना नही ।'

पर इस समय तो प्रोफेसर दुश्मन के घर मे कैद थे और दुश्मन कौन है, यह भी नही जान पाए थे । अचानक उस राक्षस ने पीठ पर लिपटी दोनो पखुडियो को आपस मे रगड कर 'टर्रर्रर्र' की आवाज शुरू कर दी ।

"ओह ! पहचाना, पहचाना तुझे ! तू तो झीगुर है ! हमारे घर मे रहने वाले घरेलू झीगुर का जगली भाई !"

झीगुर, घरेलू झीगुर (मूँछो वाला एक कीडा, जो घर मे उछलता रहता है) और दूसरे अन्य कीडे, जिनकी आवाज रात को सुनसान जगहो मे सुनाई पडती है, मुँह से नही बोलते । वे अपने पख रगडकर आवाज करते हैं ।

दुश्मन पहचान मे तो जरूर आया, पर इससे खतरा कम न हुआ । दूसरे कीडो के बच्चो और केंचुओ को खा जाने वाला झीगुर प्रोफेसर कबीर को भी चट कर सकता था । प्रोफेसर उस समय मकोडे जितने छोटे थे और झीगुर उनके लिए शेर के समान था ।

झीगुर की आवाज बन्द हो गई । उसे पता चल गया था कि गुफा मे कोई शिकार है । वह अपनी मूँछे लम्बी करके आगे बढा । कीडो की मूछे उनकी स्पर्शेन्द्रिय हैं । यानी, मूँछो से छूकर उन्हे पता चलता है कि सामने क्या है ।

प्रोफेसर डर के मारे दीवार से सटकर खडे हो गए। बस, अब पीछे हटने की जगह नही है! उस राक्षस ने आगे बढकर प्रोफेसर के कन्धो को मूंछ से छुआ। प्रोफेसर कबीर साक्षात मौत के स्पर्श से कॉप उठे। मूछे उनके चेहरे की ओर बढी। वह भय से थर्रा उठे।

दूसरे ही क्षण प्रोफेसर कबीर मे हिम्मत आयी। 'मैं भारत का महान विज्ञानशास्त्री क्या इतना डरपोक हूँ! मैं लडूंगा! मैं आदमी हूं! मैं वैज्ञानिक हूं!' उन्होने क्रोध मे आकर उन दो लम्बी मूछो पर मुक्के मारे। तुरन्त झीगुर ने मूंछे वापस खीच ली।

प्रोफेसर ने उत्साह मे आकर चुनौती दी—"खबरदार! सावधान रहना! अगर लडना ही है तो आगे आ!"

कबीर चाचा जानते थे कि झीगुर की आँखो के नीचे उसके ज्ञानतन्तुओ का केन्द्र है। चाचा के पास भौंरे के डक का वह 'भाला' था ही। उस 'भाले' से उन्होने झीगुर पर हमला कर दिया। झीगुर ने फौरन अपना सिर झुकाकर माथे की ढाल सामने ला दी। पत्थर से टकराकर जिस तरह नन्ही रुई गिर जाती है, उसी तरह प्रोफेसर का 'भाला' भी वापस आ गिरा।

प्रोफेसर कबीर चौके—'अरे! मेरा हमला तो बेकार गया! इस राक्षस के सामने क्या मुझे लाचार होना पडेगा? पीछे से जाकर पीठ पर हमला करूं, पर जाने का रास्ता कहां है?'

अब हमला करने की झीगुर की बारी थी। वह आ डटा। गुफा की दीवारो पर से मिट्टी झडने लगी।

भय से चीखे और पीछे हट गए। दीवार से सटते ही प्रोफेसर को आगे एक सुरग-सी मालूम हुई। हाँ, पीछे जगह है। भागो, भागो, जान बचाओ !

प्रोफेसर ने अपनी पीठ से गुफा को जोर से दबाया। दीवार ढह गई और आगे एक लम्बी सुरग दिखाई पडी। सुरग एक ओर जाकर मुड गई थी। कहाँ गई थी वह ? कही भी गई हो, पर जिसके पैरो पर भयकर काटे है और जिसके इतने विकराल जबडे है, उस झीगुर के मुँह मे पडने से तो भागना ही अच्छा।

प्रोफेसर उस सुरग मे भागे। आगे कोई दूसरा दुश्मन बैठा होगा तो ? होगा, तो देखा जाएगा, पर अभी तो जो झपटा आ रहा है, उसी से बचो !

सुरग की छत नीची होती गई। प्रोफेसर का सिर भागते हुए उसमे टकराया। वे लुढक गए। वे जानवर की तरह चार हाथ-पैरो से भागने लगे लेकिन थोडी ही देर मे हाँफ गए। वह पसीने से नहा चुके थे। जरा साँस लेने के लिए वह रुके और कान लगाकर सुनने लगे। क्या दुश्मन आ रहा है ? या कही रुक गया है ? ऊपर से झडती हुई मिट्टी और नीचे की धूल रौदता हुआ झीगुर झपटता आ रहा था !

'भागो ! जान बचाओ ! मौत झपटी आ रही है।'

प्रोफेसर फिर जान की बाजी लगाकर भागे, पर थोडी ही दूर जाकर सुरग खत्म हो गई। वे थककर चूर हो गए थे और उनकी साँस धौंकनी की तरह चल रही थी। निराशा से अधमरे होकर प्रोफेसर कबीर वही लुढक गए। अभी वह राक्षस आ पहुँचेगा और अपने काँटेदार पैरो मे पकडकर,

भयकर जबडो से चीरकर उन्हे खा जाएगा। उफ, कितनी वदनसीव मौत! लता और दिलीप का अब क्या होगा?

लेकिन यह कैसी आवाज है? क्या वह झीगुर आ पहुचा? नही, यह तो कोई दूसरा ही मालूम पडता है। सुरग की छत मे कोई प्राणी छेद बना रहा है। छत की मिट्टी कवीर चाचा पर झड रही है। 'धव्वे' करता हुआ मलवा नीचे आ गिरा। कवीर चाचा उसमे आधे दव गए। तभी आखे चौंधियाने वाली रोशनी हुई। मिचमिचाती आखो पर से हाथ हटाकर प्रोफेसर ने ऊपर देखा तो नीला आकाश दिखाई दिया।

पर उसी समय वह छेद वन्द हो गया। जिस तरह शीशी के मुंह मे कार्क घुसता है, उसी तरह कोई वस्तु उस छेद मे से भीतर उतरी। वह वस्तु किसी मोटी जड जैसी थी और काप रही थी। सुरग मे फिर अन्धकार छा गया।

बुद्धिशाली प्रोफेसर के मस्तिष्क मे विजली की कौंध की तरह एक विचार आया—'यह वस्तु चाहे कुछ भी हो, पर वह ऊपर जा रही है। मौत की इस अँधेरी गुफा से वाहर निकलकर जगमगाती दुनिया मे जा रही है।'

प्रोफेसर कवीर फौरन उछले और कार्क जैसी उस वस्तु से लिपट गए। इससे वह कापती वस्तु और अधिक कापकर तेजी से गुफा के वाहर निकल गई। प्रोफेसर उससे चिपके रहे और झटको के साथ इधर-उधर उछलने लगे। आखिर, कही गिर जाने के डर से उन्होंने आखे खोली और जमीन पर कूद गए। उतने ऊचे से कूदने के कारण वह वेहोश-से हो गए। कुछ क्षणो वाद उन्हे होश आया। उन्होने सामने देखा तो

एक विशाल हरी टिड्डी जमीन पर पडी थी। उसके शरीर का पिछला छोर लम्बा होकर पूंछ की तरह ज़मीन पर लेटा हुआ था।

आभार से गद्‌गद् होकर प्रोफेसर कबीर हँसते हुए बोल उठे—"नमस्ते श्रीमतीजी, क्या वह आप थी? आपने ही मुझे बचा लिया। यदि आपने एक क्षण की भी देर की होती, तो गुफा मे वह राक्षस मुझे खा जाता। पर आप मेरी बात सुन रही हैं या नही?"

अपने से कौन लिपट रहा था, यह देखने के लिए टिड्डी ने प्रोफेसर की ओर सिर घुमाया और अगले पैर सामने धर दिए। टिड्डी के कान नही होते। अगले पैरो की पतली धारी के जरिए उसे सब कुछ सुनाई देता है।

प्रसन्नता से प्रोफेसर फिर बोले—"माननीय सन्नारी, आपने अपने पैर मेरे सामने रखे हैं, इससे मुझे विश्वास हो रहा है कि आप आभार-प्रदर्शन का मेरा भाषण सुन रही है। आप मेरे सामने राक्षसी कद की मालूम पडती है, पर मै जानता हूँ कि आप केवल वनस्पति ही खाती है और मै वनस्पति तो हू नही। इसीलिए आरे-जैसे आपके भयकर पैर देख लेने के बावजूद मैं निर्भय हू। मैंने आपके महत्त्वपूर्ण कार्य मे अडचन तो जरूर डाली, पर ."

टिड्डी को इस भाषण मे जरा भी मजा नही आया। उसने पख फैलाए और 'भु र्र र्र र्र' करती हुई उड गई।

प्रोफेसर की बात सच थी। उन्होंने टिड्डी के एक महत्त्वपूर्ण कार्य मे बाधा पहुचाई थी। बात यह थी कि टिड्डी शरीर के पिछले छोर द्वारा जमीन मे छेद करके अण्डे देना चाहती

थी। इसके लिए उसने अपनी पूंछ धरती मे घुसाई। सयोगवश पूंछ सीधे झीगुर की सुरग मे चली गई। प्रोफेसर कबीर उस पूंछ से लटकने लगे और उसके साथ ही बाहर भी निकल आए। इससे बेचारी टिड्डी अण्डे न रख सकी। लटकते प्रोफेसर ने टिड्डी को डरा दिया था।

उडती टिड्डी की ओर हाथ हिलाकर प्रोफेसर ने विदा दी—"सम्हलकर जाइएगा। तकलीफ के लिए माफी चाहता हू। जय हिन्द।"

उसके जाने के बाद प्रोफेसर ने सिर खुजलाया, 'यह तो सब ठीक है, पर उसी परी ने मुझे कहा ला पटका है? मैं कहा हू, और कहा जाऊ? यदि कही से एकाध हवाई-जहाज मिल जाए, तो उसमे उडने से मालूम हो सकता है कि मैं कहा हू।'

प्रोफेसर ने ऊपर देखा। मनुष्य के हवाई-जहाज तो नही, लेकिन प्रकृति के कितने ही 'हवाई-जहाज़' कबीर चाचा ने उडते हुए देखे। वे क्या थे? एक छोटे झाड पर रेशमी कपासी 'आम' पककर फूट गए थे। उनमे से सेमल की रूई निकलकर हवा मे उड रही थी। प्रोफेसर ने सोचा, 'यदि मैं इन फाहो मे से किसी एक पर सवार हो जाऊ, तो आकाश मे उडने लगू। फिर मालूम हो जाएगा कि मैं कहा हू और मुझे कहा जाना चाहिए। इसमे जोखिम तो जरूर है, पर साहस किए बिना काम नही चलेगा।'

बहुत मेहनत करके प्रोफेसर सेमल के झाड पर चढ गए, पर तभी एक आफत आ पडी। मानो हजारो हवाई-जहाज़ एक साथ गडगडाहट कर रहे हो, ऐसी आवाज़ सुनाई दी।

मधुमक्खियो की एक बडी-सी टुकडी उस झाड के पास उडती हुई दीखी। प्रोफेसर डर गए। उन हजारो मधुमक्खियो मे से यदि एक भी कबीर चाचा को डक मारती, तो चाचा तत्काल मर जाते। वह ज़रा भी हिले-डुले बिना झाड से लिपटे रहे। बचने का वही एक मात्र उपाय था।

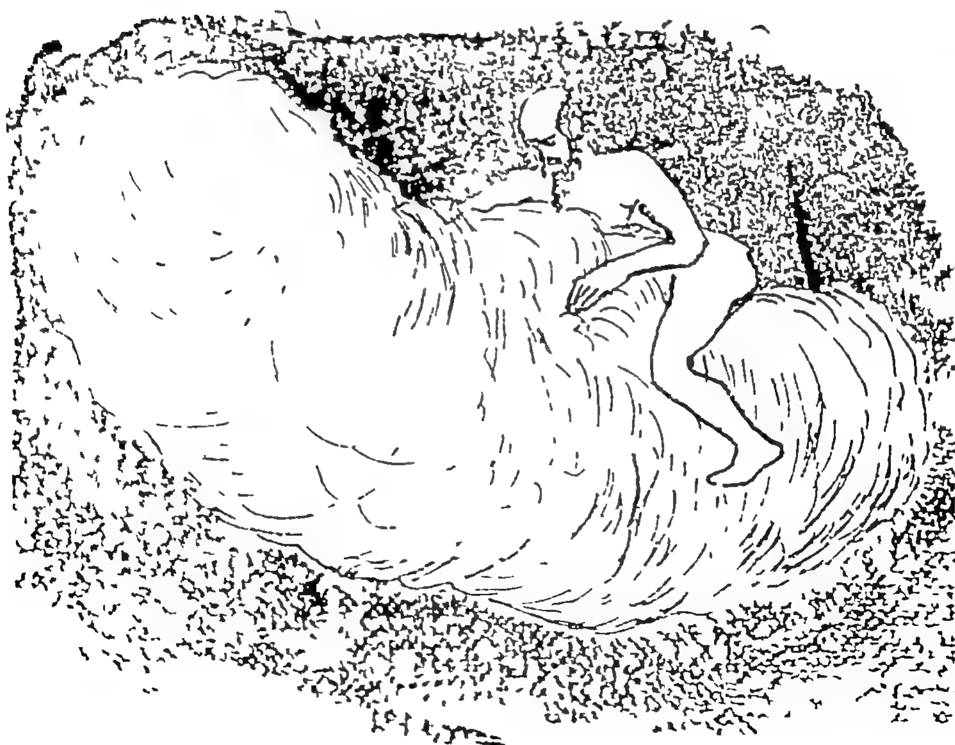
इतनी बडी टुकडी यहा क्यो उड रही है? प्रोफेसर कबीर को मधुमक्खियो के जीवन की एक बात याद आयी। कही कोई मधुछत्ता बहुत बडा हो गया है। वहा की रानियो मे से एक रानी अपना नया मधुछत्ता बनाने के लिए अच्छे स्थान की खोज मे निकली है। उसके साथ नई पैदा हुई मजदूर और सैनिक मधुमक्खिया हैं। वे अपनी रानी के प्रति वफादार है। जहा-जहा रानी जाएगी, वे भी जाएगी। अब वे नया मधुछत्ता बनाएगी। उनकी रानी उसमे अण्डे देगी और वही रहेगी। वे अण्डो और रानी की सेवा करेंगी और मधु बनाएगी।

प्रोफेसर अपना भय भूलकर खुश होते हुए बोल उठे—"समझा! समझा! तुम क्यो भिनभिना रही हो। तुम्हारा सदेश है कि कोई भी व्यक्ति अपने स्वार्थ के लिए नही, बल्कि समूचे समाज के लिए काम करे। काम पहले करे, आराम बाद मे। 'आराम हराम है'—का सूत्र माने। ऐसा आदर्श समाज यदि कोई है तो वह तुम्हारा ही है। हम मनुष्य तो तुम्हारे सामने कुछ भी नही। हम तो लुटेरे है, जो इतनी मेहनत से बनाया गया तुम्हारा मधु लूट लेते है। हमारी मक्कारी की कोई सीमा नही। हम तुम्हारी किसी रानी को पकडकर उसे कैदखाने जैसे मधुछत्ते के पिजडे मे रखते हैं, ताकि तुम सब भी अपनी रानी के पीछे-पीछे आओ, उस नकली मधुछत्ते मे

ही काम करो और वही मधु बनाओ। और जब मधु पक जाता है, हम उसे निचोड लेते हैं।"

प्रोफेसर मुग्ध होकर मधुमक्खियो की गूंज सुनते रहे। बडे आकार और छोटे पखो वाली उनकी रानी भी उन्होने देखी। प्रत्येक मिनट मे हजारो बार फडकते पखो की आवाज ही उनका गुजन है। मधुमक्खिया और अन्य कीडे मुह से गुजन नही करते।

कबीर चाचा यह सब सोच ही रहे थे कि मधुमक्खियो



की टुकडी उस झाड को पार करके आगे उड गई।

'ओह ! चलो, एक बला टली ! अब सीधे उस गुब्बारे पर !'

प्रोफेसर एक फटे हुए कपासी 'आम' पर उतरे। उसमे से निकलती रेशमी कपास का कुछ भाग बटकर उन्होने रस्सी-सी बनाई। तभी एक झोका आया। वह रेशमी कपास गुब्बारे की तरह हवा मे उडने लगा। प्रोफेसर भी उसकी रस्सी से चिपके हुए उडने लगे।

'वाह, भई, वाह ! हवाई-जहाज पर बैठकर मैंने दुनिया की सैर की है, पर ऐसे गुब्बारे पर सवारी का मजा कुछ और है। कुदरत ने क्या मेरे लिए ही यह गुब्बारा बनाया है ?'

'नही ! नही !' प्रोफेसर को याद आया—'इस तरह हवा मे कपास उडने का कारण अब मेरी समझ मे आया। कुदरत भी बडी चालाक है। बिना उद्देश्य के वह कुछ भी नही करती। जिस वनस्पति मे से कपास निकलती है, उसके बीज छोटे और हलके होते हैं। ऐसी वनस्पतियो का वश बढाना हो और उनका दूर-दूर तक विस्तार करना हो, तो इसके लिए कोई उपाय खोजना ही होगा। ऐसे बीज मनुष्य या पशु-पक्षियो के किसी काम के नही होते, अत वे उन्हे नही फैलाते। इसलिए कुदरत ने यह उपाय किया है कि वे बीज इस उडते कपास मे चिपके रहे। अब ये 'गुब्बारे' मीलो दूर जाकर गिरेंगे और वहा ये बीज उगेंगे। वाह री, कुदरत ! तेरी भी क्या करामात है !'

झाड, टेकरी, झाडिया, खेत और मैदानो पर से प्रोफेसर

का गुब्बारा उडा जा रहा था। नीचे की हरियाली देख-देखकर प्रोफेसर खुश हो रहे थे। अचानक सामने पवई सरोवर नज़र आया। प्रोफेसर चौंक उठे—'अरे, यह तो मैं सरोवर की ओर जा रहा हू। यह गुब्बारा अगर सरोवर के बीच मे उतरेगा, तो मै डूब जाऊगा! मेरे लिए तो वह प्रशान्त महासागर जितना है। गुब्बारा पानी की सतह पर आए, इसके पहले ही मुझे उतर जाना चाहिए।'

प्रोफेसर उस रेशमी कपास मे से कपास के छोटे-छोटे गुच्छे निकाल-निकालकर उडाने लगे, जिससे फाहा छोटा होता जाए और उसमे कम वायु समाने से धीरे-धीरे वह नीचे उतरता जाए। उनकी युक्ति सफल हो गई। बचे हुए गुच्छे के सहारे प्रोफेसर कबीर इस तरह उतरने लगे, मानो हवाई-छतरी से उतर रहे हो। प्रोफेसर को बडा मज़ा आया। पवई सरोवर के उत्तरी किनारे पर वह उतर रहे थे कि सहसा उनका ध्यान पानी की लहरो पर इधर-उधर उछल रहे दो बच्चो पर गया। वे बेहोश थे। प्रोफेसर चीख उठे—"लता! दिलीप!"

लता और दिलीप के हालचाल

हम लता और दिलीप को मकडे के कैदखाने मे हवा के बिना दम घुटते हुए छोड आए थे। चलो, उनके हालचाल देखे।

तली मे से फीका-फीका प्रकाश आ रहा था। उसमे दिलीप ने देखा कि कीचड मे से वनस्पति का एक बीज बाहर

आया और ऊपर चढकर अदृश्य हो गया। दिलीप ने सोचा कि यदि यह बीज तम्बू के अन्दर नही आया है तो वह जरूर तम्बू के बाहर पानी की खुली सतह पर पहुच गया होगा। वह बीज कीचड मे से निकलकर ऊपर कैसे चढ गया? सहसा दिलीप को कुछ ध्यान आया। वह बोला—'हा, मुझे याद आ रहा है। कबीर चाचा ने एक दिन यही बात मुझे समझाई थी। मैंने पानी मे कुछ चने डालकर रखे थे। वे डूबे हुए थे, पर एक दिन जब चनो मे छिपा जीवन प्रकट हुआ और जब उनमे अकुर फूटे, तो वे मुक्त हवा मे सास लेने के लिए पानी की सतह पर आने लगे।'

दिलीप को बिजली की कौंध की तरह एक उपाय सूझ गया। उसने चिल्लाकर लता से कहा—"लता! जल्दी डुबकी लगा। ये 'लाइफबाय' (तैरने के रबर के गोले) मुक्त जगत मे जा रहे है। उनमे से किसी एक से चिपक जा।"

अधीर होकर दिलीप ने लता का हाथ खीच कर डुबकी लगाई। दूसरे कई बीज ऊपर जा रहे थे। दोनो बच्चे एक-एक बीज से चिपक गए। हवा के अभाव मे उनका दम घुट जाता, इसके पहले ही वे पानी की सतह पर कार्क की तरह फेंक दिए गए। रोशनी से उनकी आखे चौंधिया गई। वे गहरी-गहरी सासे लेने लगे।

दिलीप ने लता को खोज निकाला और बोला—"लता, तू जिन्दा तो बच गई?"

"और आप तो कुशल से है, बडे भैया?" लता ने प्रसन्न होकर पूछा। ऊपर आकाश और नीचे पानी देखकर लता ने एक नि श्वास छोडा—"अब क्या होगा?"

दिलीप ने कहा—"बहन ! जो हिम्मत हार जाता है, वह कभी नही जीतता । लेकिन जो हिम्मत नही हारता, अन्त मे उसकी जीत अवश्य होती है । हमे जीना है और जीतना है । हमे किनारे तक पहुच जाना चाहिए । ईश्वर ने हमारे लिए ही ये नावें भेजी हैं ।"

लता मे हिम्मत आयी । बीज की उस नाव पर सवार होकर वे किनारे की ओर जाने लगे ।

लता अचानक चीख उठी—"ओ, अम्मा री !"

'ड्रो, ड्रो, ड्रो'—ऐसी गर्जना करता, पानी की सतह पर उछलता, पाच-मजिले मकान-सा ऊचा एक राक्षस था, जो पानी मे घूम रहा था ।

दिलीप ने लता को ढाढस बधाया—"अरे, वह तो मेढक है !"

"हमे खा जाएगा, तो ?" लता ने भयभीत होकर पूछा ।

"वह दूल्हा हमे नही, शादी के लिए दुल्हन खोज रहा है । इसीलिए वह 'ड्राऊ-ड्रो' कर रहा है । हम सही-सलामत निकल जाएगे ।" और सचमुच मेढक को कुछ भी मालूम न हो सका ।

बच्चे अभी थोडी ही दूर गए थे कि लता फिर भय से चीख उठी ।

धारियोदार शरीर और लम्बे, मुडे हुए पैरो वाला एक राक्षस पानी पर इधर-उधर दौड लगा रहा था । पीठ पर उसके पाच बच्चे चढे हुए थे । अब तो दिलीप को भी ऐसा लगा कि अन्तिम घडी आ पहुची है, पर तभी न जाने कहा से निकलकर उसके जैसा ही एक दूसरा राक्षस आ पहुचा ।

उसकी पीठ पर भी बच्चे थे। दोनो राक्षसो के बीच तुमुल युद्ध छिड गया।

उन दोनो को लडने मे मशगूल देखकर बच्चो की हिम्मत वापस लौट आयी। दिलीप बोला—"लता, कबीर चाचा ने एक बार पानी के धारियोदार मकडे की बात बताई थी, याद है ? यह वही है।"

लता ने विस्मय से युद्ध देखते हुए कहा—'पर उनकी पीठ पर बच्चे क्यो बैठे है ? और दोनो राक्षस लड क्यो रहे है ?"

दिलीप ने जवाब दिया—"ये मकडे बिच्छू जाति के है। इस प्रकार के मकडो की मादा, बिच्छुओ की मादा की ही तरह, बच्चो को अपनी पीठ पर बिठाकर घुमाती है। मकडे ऐसे खूखार प्राणी हैं कि एक-दूसरे को देखते ही खा जाते है। यदि मादा को मौका मिलता है, तो वह नर तक को खा जाती है।"

दोनो मादाओ के बीच भयकर सग्राम चल रहा था। झटको के कारण उनके बच्चे भी पानी मे गिर पडे थे। आखिर एक मादा हार गई। उसके टुकडे-टुकडे हो गए। उस मरी हुई मादा के बच्चे भी, विजयी मादा के शरीर पर चढ गए। दुश्मन के बच्चो को अपनी पीठ पर चढने देने मे उसने कोई एतराज भी नही उठाया।

"दिलीप भैया ! मैने तो यह सोचा था कि अपने दुश्मन को मारने के बाद यह उसके बच्चो को भी खा जाएगी।"

दिलीप ने कहा—"लेकिन इसका मतलब यह नही कि यह राक्षसी उदार है। इसके विपरीत, वह बिल्कुल मूर्ख है।

उन्हे गिनना नही आता और पाच के बदले दस बच्चे उसकी पीठ पर चढे हैं, इसका भी उसे भान नही है।"

"कीडो की दुनिया भी अजीब है, दिलीप भैया!"

बच्चे किनारे की ओर बढे। किनारा दूर नही था, लेकिन वहा और भी अधिक खतरा था। कमल के पत्तो पर राक्षसी पजो वाले पीहो पक्षी कीडे पकडते हुए दौड रहे थे। हवा मे फुर्फुदी उड रहे थे। पानी मे मेढक टर्रा रहे थे। सुरक्षित किनारे की खोज मे भाई-बहन भटकने लगे। आखिर उन्हे वैसा किनारा मिल ही गया और उन्होने अपनी 'नाव' किनारे लगाई। धरती पर पैर रखते ही उन्होने छुटकारे का दम लिया, पर आफतो की पिटारी अभी समाप्त न हुई थी।

लता ने मुह लटकाकर कहा—"भैया! भूख लगी है।"

दिलीप को भी याद आया कि सुबह नाश्ता करके घर से निकलने के बाद पेट मे कुछ भी नही गया है। उसने पूछा—"तुझे क्या अच्छा लगेगा?"

"मुझे तो घर की याद आ रही है। वहा हम पीढे पर बैठे हो, मा गर्म-गर्म रोटी तवे से उतारकर परोस रही हो, लहसुहन के बघार वाली दाल हो, गोभी के फूल और टमाटर का साग हो, रोटी के साथ केला हो, शक्कर-घी हो, चटनी हो, भजिए और समोसे हो"

दिलीप के मुह मे भी पानी आ गया, लेकिन वह जानता था कि आज तो घर मे भी किसी ने कुछ न खाया होगा। रसोई भी नही बनी होगी। मा आठ-आठ आसू रो रही होगी। दिलीप को निनवी आ गई, परन्तु हिम्मत करके, गला खखारकर उसने कहा—"पगली, आज तो हमारे

फलाहार का दिन है। आज हमे केवल फल खाने है। चल, इधर-उधर कही फल ढूढे।"

फलो की तलाश मे वे घोर जगल मे घुसे।

ऊपर ऊचे पेडो मे बन्दरो की एक टोली थी। किसी बन्दर ने छलाग मारी और एक सूखी डाल नीचे आ गिरी। नीचे सूखी पत्तिया थी, जो खडक उठी।

दिलीप बोला—"अच्छा हुआ कि डाल हमारे ऊपर न गिरी, नही तो चटनी बन जाती हमारी।"

उसी समय उन सूखी पत्तियो के नीचे कुछ खडखडाहट हुई और डाल गिरने से खलल पहुँचने के कारण एक बडा भारी कनखजूरा बाहर निकल आया। बच्चो को वह लम्बी रेलगाडी-सा मालूम हुआ।

"ओ मा!" लता चीखी।

"चुप! चुप!" दिलीप ने मुह पर अँगुली रखकर कहा—"हल्ला मत कर। वह बदमाश हमे देखेगा, तो खा जाएगा।"

जैसे बिजली की लम्बी गाडी चली जा रही हो, ऐसे कोलाहल के साथ कनखजूरा वहाँ से पार हो रहा था। कितने सारे जोडो का बना हुआ शरीर। हर जोड पर दो-दो पैर। आगे दो छोटी मूछो की बनी हुई स्पर्शेन्द्रिय, विकराल जबडे और जबडे के दोनो ओर जहर की गाठे। काले-लाल रग का उसका शरीर कैसा चमक रहा था!

लता और दिलीप को देखते ही वह उनकी दिशा मे झपटा। दिलीप चीखा—"भागो!"

दिलीप लता का हाथ पकडकर भागा। उसी समय एक

अजीब-सी आवाज हुई। यह क्या? पीछे घूमकर बच्चो ने देखा कि एक बडी छिपकली ने कनखजूरे को पकड लिया है। कनखजूरा एक बालिश्त लम्बा था। वह छिपकली के चारो ओर लिपट गया। पर छिपकली ने एक ही वार काटकर उसके दो टुकडे कर डाले। फिर, जिस तरह गाय हरी घास चबा जाती है, उसी तरह वह उसे चबाकर गटक गई। यह दृश्य देखकर बच्चो का हृदय धक्-धक् करने लगा। वे पूरी ताकत लगाकर भाग गए।

लता ने हाफते हुए कहा—"भैया! पानी से ज्यादा खतरा तो धरती पर है!"

"हाँ, इन जीवो की दुनिया भयकर है। शिकार कर लो या शिकार बन जाओ, मारो या मर जाओ, यही यहाँ का नियम है।"

बच्चो को अभी तक खाने की कोई वस्तु न मिली थी। उन्हे गर्मी लग रही थी। दौड-धूप से उनका गला सूख रहा था। कही से मानो झरना बह रहा हो, ऐसी कल-कल आवाज़ आयी। उन्होने सोचा, खाने को न जाने कब मिलेगा, अभी पेट भरकर ठडा पानी ही पी लें। दिलीप ने एक झाड पर चढ़कर देखा कि झरना कहा है। झरना अधिक दूर नही था। जल्दी से उतरकर वे उसके किनारे पहुंच गए।

ठीक पानी के किनारे पर पीले कनेर का एक पौधा था। पीले कनेर के फूल महादेव को चढाए जाते है। उस पौधे मे एक कोयल अपनी खुराक खोज रही थी। उसने एक पका फल तोड़कर हवा मे उछाला और उसे मुह मे दबोचने को लपकी, लेकिन फल उसके मुह मे न जाकर नीचे

पानी के किनारे जा पडा, जहा वच्चे खडे थे ।

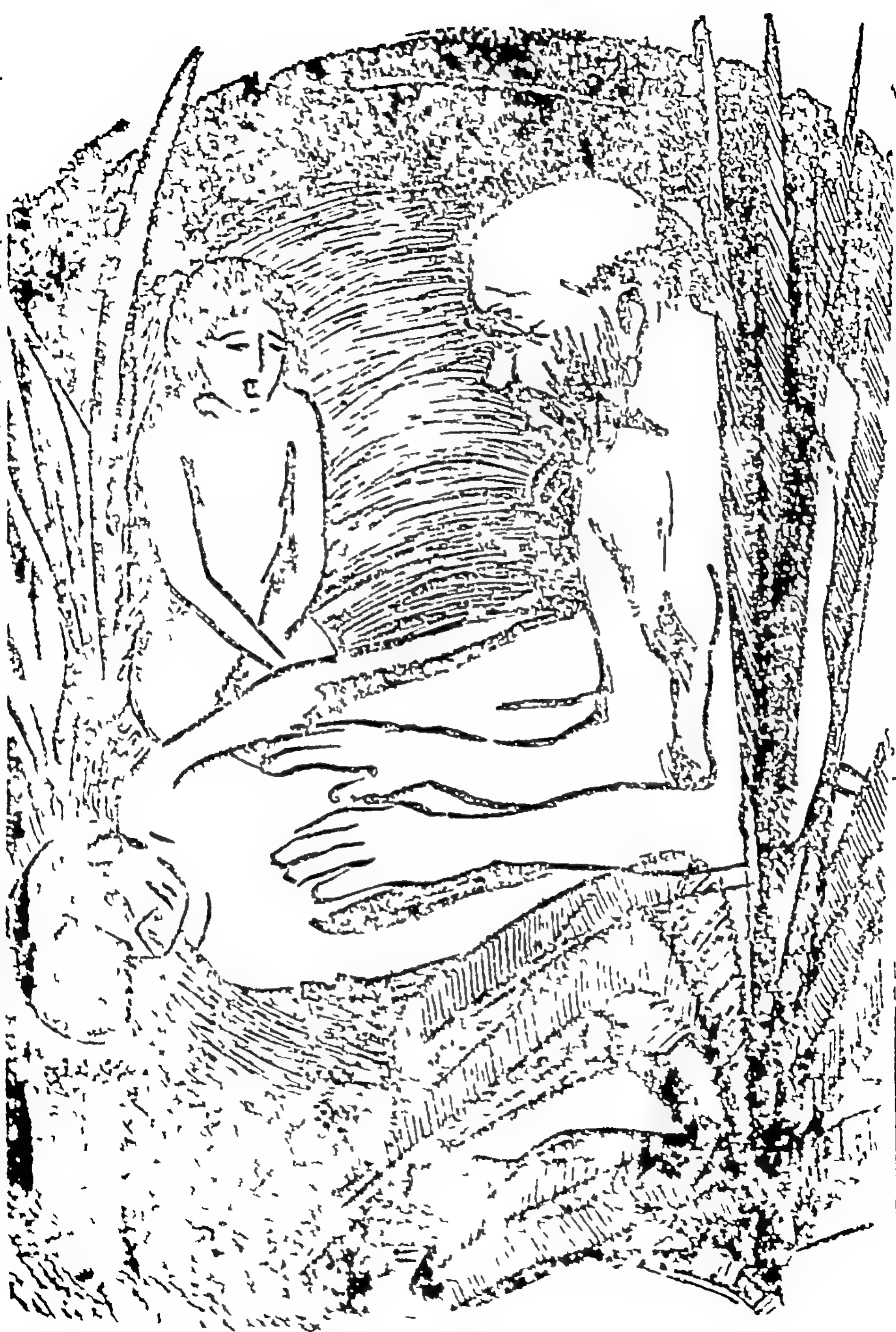
'कितना सुन्दर फल है !" लता बोल उठी—"कोयल ने जो फल पसन्द किया, वह ऐसा-वैसा थोडे ही होगा ! यह एक फल तो हमारे लिए कई दिन क्या, कई महीनो की खुराक का काम देगा ।"

दोनो वच्चे फल की ओर दौडे, पर तभी कोयल उस फल को उठाने के लिए नीचे आयी । उसके विशाल परो के फडफडाने से पवन का ऐसा सपाटा आया कि कई सूखे पत्ते, धूल, कचरा और उनके साथ लता और दिलीप भी उडकर झरने के पानी मे जा गिरे और बहने लगे ।

चाचा से मुलाकात और हरी गायें

प्रोफेसर कबीर जब 'हवाई छतरी' मे नीचे उतर रहे थे, तब उन्होने दो वच्चो के शरीर पानी मे तैरते देखे । कबीर चाचा का दिल धडकने लगा । वह धरती पर उतरकर पानी मे कूद पडे और दोनो वच्चो को बाहर खीच निकाला । जाच करने पर मालूम हुआ कि वच्चो की नाडी बहुत धीमे-धीमे चल रही थी । अभी उनके प्राणो की रक्षा की जा सकती थी ।

प्रोफेसर ने दोनो वच्चो को पैरो से पकडकर उल्टे सिर लटका दिया । तुरन्त उनके पेट मे से फेन वाला पानी बाहर निकलने लगा । वच्चे दर्द से कराह उठे ।



"ओह ! अब कोई डर नही है। ईश्वर ने मुझ पर दया की है।" प्रोफेसर कबीर बोले।

जब सारा पानी निकल गया तब प्रोफेसर ने उन्हे सुलाकर उनके शरीर पर मालिश की। बच्चो मे गर्मी आयी, सांस भी ठीक चलने लगी। थोडी ही देर मे उन्होने आंखे खोल दी। अपने सामने कबीर चाचा को देखकर वे आश्चर्य और आनन्द से चीख उठे—"कबीर चाचा !"

कबीर चाचा उनसे प्रेम से लिपट गए। फिर उन्होने पूछा—"अब बताओ, मेरी प्रयोगशाला मे घुसकर सबसे पहले उस जादुई शर्बत को पीने का साहस किसने किया ?"

भाई-बहन शर्म से गूगे हो गए। उनके सिर लज्जा से झुक गए।

कबीर चाचा ने कहा—"खैर, कोई बात नही। जो हो गया, सो हो गया, पर तुम लोगो की शैतानी से हम सब बडी मुसीबत मे फस गए है। उससे हमे छुटकारा किस प्रकार और कब मिलेगा, यह कोई नही बता सकता। मै तो तुम लोगो से कुछ नही कहूँगा, लेकिन जब घर पहुँचोगे, तो मां-बाप तुम्हे डाटे बिना नही छोडेगे।"

"मा और पिताजी हमे कभी नही डाटते," दिलीप ने उमग मे आकर कहा।

लता ने भी हाँ मे हाँ मिलाई—"हमसे कोई भूल हो जाती है, तो वे हमे प्यार से समझाते है और हम वैसी भूल दूसरी बार कभी नही करते।"

प्रोफेसर ने नि श्वास छोडते हुए कहा—"तुम लोग बहुत भाग्यवान हो। तुमने इस नये जमाने मे, स्वतन्त्र भारत

मे जन्म लिया है, जहा मा-वाप और शिक्षक वच्चो की भावनाओ को समझते हैं। मैं जव तुम्हारे जितना था, तब घर पर मा-वाप और स्कूल मे शिक्षक की मार खा-खाकर ही वडा हुआ। अभी भी उस मार का दर्द कमर मे वाकी है। चलो, अव चले।"

"कहा ?"

'घर, और कहा ?"

'घर ?" लता और दिलीप खुशी के मारे नाच उठे—"क्या हम एक घटे मे घर पहुँच जाएगे ?"

"एक घटे मे ? अरे, एक महीने मे भी नही पहुंच पाएँगे। जानते हो, हम अपने घर से पाँच मील दूर है।"

"पाच मील तो मैं एक घटे मे दौड सकती हूँ," लता अधीर होकर वोली।

कवीर ने जरा हँसकर कहा—"मैं भी दौड सकता था, वशर्ते मैं साढे पाच फीट ऊँचा होता और मेरा हर कदम दो फीट का होता। आज मैं मकोडे जितना हूँ और तुम चीटी जितने।"

'पर आप तो जितने थे, उतने ही वडे लग रहे है। हम भी जितने वडे थे, उतने ही वडे एक-दूसरे को देख रहे हैं। हा, दुनिया की दूसरी चीजे अवश्य हमे विराटकाय दीखती हैं।" दिलीप ने कहा।

प्रोफेसर ने बताया—"जो जादुई शर्वत हमने पीया है, उसके असर से हम जितने वडे थे, उनके हजारवे भाग के हो गए हैं। बाद मे मैं तुम दोनो से वडा था, इससे कद घट जाने के बाद भी अनुपात मे मैं तुम दोनो से वडा हूँ, और तू

"ओह ! अब कोई डर नही है। ईश्वर ने मुझ पर दया की है।" प्रोफेसर कबीर बोले।

जब सारा पानी निकल गया तब प्रोफेसर ने उन्हे सुलाकर उनके शरीर पर मालिश की। बच्चो मे गर्मी आयी, सास भी ठीक चलने लगी। थोडी ही देर मे उन्होने आँखें खोल दी। अपने सामने कबीर चाचा को देखकर वे आश्चर्य और आनन्द से चीख उठे—"कबीर चाचा !"

कबीर चाचा उनसे प्रेम से लिपट गए। फिर उन्होने पूछा—"अब बताओ, मेरी प्रयोगशाला मे घुसकर सबसे पहले उस जादुई शर्बत को पीने का साहस किसने किया ?"

भाई-बहन शर्म से गूगे हो गए। उनके सिर लज्जा से झुक गए।

कबीर चाचा ने कहा—"खैर, कोई बात नही। जो हो गया, सो हो गया, पर तुम लोगो की शैतानी से हम सब बडी मुसीबत मे फस गए हैं। उससे हमे छुटकारा किस प्रकार और कब मिलेगा, यह कोई नही बता सकता। मैं तो तुम लोगो से कुछ नही कहूँगा, लेकिन जब घर पहुँचोगे, तो माँ-बाप तुम्हे डाटे बिना नही छोडेंगे।"

"मा और पिताजी हमे कभी नही डाटते," दिलीप ने उमग मे आकर कहा।

लता ने भी हाँ मे हाँ मिलाई—"हमसे कोई भूल हो जाती है, तो वे हमे प्यार से समझाते है और हम वैसी भूल दूसरी बार कभी नही करते।"

प्रोफेसर ने नि श्वास छोडते हुए कहा—"तुम लोग बहुत भाग्यवान हो। तुमने इस नये जमाने मे, स्वतन्त्र भारत

मे जन्म लिया है, जहा मा-बाप और शिक्षक बच्चो की भावनाओ को समझते है। मै जब तुम्हारे जितना था, तब घर पर मा-बाप और स्कूल मे शिक्षक की मार खा-खाकर ही बडा हुआ। अभी भी उस मार का दर्द कमर मे बाकी है। चलो, अब चले।”

“कहा ?”

“घर, और कहा ?”

“घर ?” लता और दिलीप खुशी के मारे नाच उठे—“क्या हम एक घटे मे घर पहुँच जाएगे ?”

“एक घटे मे ? अरे, एक महीने मे भी नही पहुंच पाएँगे। जानते हो, हम अपने घर से पाँच मील दूर है।”

“पाच मील तो मैं एक घटे मे दौड सकती हूँ,” लता अधीर होकर बोली।

कबीर ने जरा हँसकर कहा—“मैं भी दौड सकता था, बशर्ते मै साढे पाच फीट ऊँचा होता और मेरा हर कदम दो फीट का होता। आज मैं मकोडे जितना हूँ और तुम चीटी जितने।”

“पर आप तो जितने थे, उतने ही बडे लग रहे हैं। हम भी जितने बडे थे, उतने ही बडे एक-दूसरे को देख रहे हैं। हा, दुनिया की दूसरी चीजे अवश्य हमे विराटकाय दीखती है।” दिलीप ने कहा।

प्रोफेसर ने बताया—“जो जादुई शर्बत हमने पीया है, उसके असर से हम जितने बडे थे, उनके हजारवे भाग के हो गए है। कद मे मै तुम दोनो से बडा था, इसने कद घट जाने के बाद भी अनुपात से मै तुम दोनो से बडा हूँ, और तु

लता मे वडा है। पर दुनिया की दूसरी चीजे तो जितनी वडी थी, उतनी ही वडी हैं। केवल हमी चीटी और मकोडे जितने छोटे हो गए है। इसी से हमे सारी वस्तुएँ विराट लगती हैं। चलो, अब हम चलना शुरू कर दें।"

"ठीक! अब हमारी समझ मे सब कुछ आ गया," लता ने कहा, "चलिए, अब घर की ओर चले।"

थोडी ऊँचाई पार करने के वाद कवीर चाचा ने कहा—"देखो, दूर उस छोटी टेकरी पर तुम्हे लकडी और लाल झडी दीख रही है न?"

"हाँ।"

"वह लाल झडी मैंने लगाई है। उस झडी के नीचे एक पेटी है। पेटी मे एक छिद्र है। उसके अन्दर एक रसायन का चूरा है। वहाँ पहुँचकर हमे छेद की राह पेटी मे घुसना है। जब हम उस चूरे को खाएगे, तो जितने वडे थे उतने ही वडे हो जाएगे!"

"सचमुच?" लता को यह सुनकर रोमाच हो आया।

"लेकिन कवीर चाचा, अगर उस पेटी को कोई उठा ले गया तो?" दिलीप ने शक जाहिर किया।

सुनते ही प्रोफेसर का चेहरा फक पड गया। घबराहट से उनका हृदय धडकने लगा। वह मन-ही-मन सोचने लगे—'वह स्थान निर्जन है, इससे मुझे ऐसा विचार आया ही नही था। यदि सचमुच कोई उस पेटी को कोई ले गया, तो भयकर विपत्ति आ पडेगी। लेकिन मुझे अपनी यह चिन्ता वच्चो के सामने प्रकट नही करनी चाहिए।'

प्रोफेसर ने खखारकर गला साफ किया। स्वस्थ दिखाई

देने के लिए वह मुसकराने लगे। उन्होने बच्चो को जवाब दिया—"ऐसा नही हो सकता। वह प्रदेश बिलकुल निर्जन है, वहा कोई आता-जाता नही। चलो, कूच करो।"

थोडो देर बाद प्रोफेसर कबीर ने बच्चो को बुदबुदाते सुना—

"तू पूछ न!"

"नही भैया, आप ही पूछिए।"

"ऊहुँ।"

उनकी बात सुनकर कबीर चाचा ने कहा—"तुम लोगो की चिन्ता बेकार है। जिस प्रकार हमारे पूर्वज गुफा मे, झाडी या झोपटी मे रात बिताते थे, वैसे ही हम भी राते बिताएगे।"

'पर हम खाएगे क्या?" दिलीप ने पूछा,—"हमने कल जो घर पर नाश्ता किया था, उसके बाद कुछ भी हमारे पेट मे नही गया है।"

"सचमुच?'

"हां, हमे कनेर का एक पका फल मिला था।"

प्रोफेसर ने चौंककर अधीर होते हुए पूछा—"अ॰र र! तुमने उसे खाया तो नही? वह तो बहुत जहरीला होता है।"

दिलीप ने सिर हिलाकर बताया कि किस प्रकार कोयल के झपाट के कारण वे झरने मे गिर पडे थे और उस फल को नही खा सके थे।

"सचमुच, ईश्वर ने ही तुम लोगो को बचा लिया। यदि उस फल को तुमने खा लिया होता तो जिन्दा न बचते।"

तब तो उस फल को खाने वाली कोयल मर गई

होगी ?" लता को कोयल पर बडा तरस आ रहा था।

"नही, जो एक के लिए जहर है, वही दूसरे के लिए अमृत है। कोयल को कनेर का जहर नही चढता। ये कुदरत की खूबिया है।"

कबीर चाचा अभी कुदरत की कुछ और खूबिया भी बताते, लेकिन दिलीप भूख के मारे बेचैन था।

"हमारी आखो के सामने भूख के कारण अधेरा छा रहा है," दिलीप ने हिम्मत करके कहा।

"ओह! मैं भी कैसा भुलक्कड हू। अब तक तुम्हारी भूख का विचार ही नही आया। निश्चय ही हम अच्छा भोजन करेंगे, पर फिलहाल तो मुझे तुम्हे दूध पिलाना है।"

"दूध ? भैस का या गाय का ?"

"मैं तुम्हें 'हरी गाय' का दूध पिलाऊगा। भैस के दूध जैसा नही, उससे अच्छा दूध।"

"अरे, लेकिन गाय तो हरी नहीं होती!" बच्चे आश्चर्य से बोल उठे।

"मैं दिखाता हू हरी गाये। पीछे-पीछे आओ।"

वे एक पौधे के पास पहुचे, जो उनके लिए ताड के समान ऊचा था। उसके पत्ते तो इस त्रिपुटि के लिए क्रिकेट के मैदान जितने थे। वे एक पत्ते पर चढ गए। तभी प्रोफेसर खुशी से चीख उठे—"देखो, देखो! वह रहा गायो का झुण्ड। तुम्हारी हरी गाये यहां चर रही है।"

पौधे के पत्ते पर हरी गायें ? बच्चो की समझ मे कुछ न आया।

"केवल गायें ही नही चर रही, उनके छलकते दूध की

यहा एक तलैया भरी है।" प्रोफेसर ने रस की एक तलैया दिखाते हुए कहा। उस विशाल पत्ते के एक कोने मे हरे कीडे घूम रहे थे। बच्चो की समझ मे कुछ नही आया और वे आखें फाड-फाडकर उन्हे देखने लगे।

प्रोफेसर कबीर ने उन्हे समझाया—"ये कीडे पौधे का रस पीते है और अपने शरीर मे से एक प्रकार का स्वादिष्ट मीठा रस निकालते है। चीटी और मकोडो को यह रस बहुत अच्छा लगता है, इसलिए वे इन 'हरी गायो' को अपने बिल मे ले जाकर पालते और उनका दूध पीते है। जिस प्रकार हमारी गाय थपथपाने से या अपने बछडे के दूध पीने से खुश होकर अधिक दूध देती है, उसी प्रकार चीटी और मकोडे इन हरी गायो को अपनी मूछो से थपथपाते हैं और उन्हे खुश करके अधिक दूध प्राप्त करते हैं।"

"क्या यह सच है?" बच्चे अविश्वास से बोले।

"तुम यह सब मानने के लिए तैयार नही हो, यह मैं जानता हूं, परन्तु, मैंने जो कुछ कहा है, वह बिलकुल सच है।"

"इन कीडो की दुनिया तो बडी अजीब है।"

"आओ, हम इन गायो से शरीर के छलक चुके दूध (रस) के तालाब से दूध पिए।"

तीनो ने उकडू बैठकर 'दूध' पिया और डटकर पिया।

"वाह वाह! कितना मीठा दूध है!" वे बोल उठे।

पेट की ज्वाला शान्त होने के बाद दिलीप का ध्यान अपने पैरो के पास गया। वहा, पत्ते मे असख्य छिद्र थे। ऐसा लग रहा था मानो वे जिन्दा हो। वे छिद्र हिल-डुल रहे थे। दिलीप डर गया। कही ये छिद्र खतरनाक न हो!

प्रोफेसर ने उसकी घबराहट देखकर कहा—"तू इतना भी नही जानता ? हमारे एक नाक और दो नथुने होते है, पर वनस्पति के तो असख्य नाकें होती हैं। इन्ही असख्य छिद्रो के जरिए वह दिन के प्रकाश मे कार्बन-डाई-ऑक्साइड यानी जहरीली वायु, सास द्वारा खीच लेती है और प्राणवायु निकालती रहती है। पानी, धूप और वनस्पति का हरा रग (हरित द्रव्य, क्लोरोफिल)—ये तीनो और कार्बन वायु मिलकर वनस्पति के लिए खुराक बनाते हैं, जिससे वनस्पति की बाढ होती है।"

"तब वनस्पति मे भी हमारी तरह जीवन होता होगा ?" लता ने पूछा।

"वह तो होता ही है। हमारे विश्वविख्यात वैज्ञानिक श्री जगदीशचन्द्र बसु ने यहा तक सिद्ध कर दिया था कि वनस्पति भी हमारी तरह भावनाओ का अनुभव करती है।"

पेट भरने से दिलीप को जम्हाई आयी। उसने कहा—"कबीर चाचा, अब आगे चलने से पहले यदि हम थोडा आराम कर ले तो कैसा रहे ?"

"अच्छी बात है। हो जाओ लम्बे ! हमने बहुत परिश्रम किया है," कहते-कहते प्रोफेसर दोनो हथेलियो का तकिया बनाकर लेट गए। थोडी ही देर मे उनकी नाक बजने लगी।

पर बच्चो को नीद न आयी। लता रोनी सूरत बनाकर बोली—"मा बेचारी रो रही होगी।"

दिलीप भी यही सब सोच रहा था। कहने लगा—"हा, और पिताजी ने भी कल से कुछ नही खाया होगा। वह रात भर जागे होगे और रो-रोकर "

मानो उन्हे घर की बात भुला देने के लिए ही, राक्षसी

आकार के कछुए जैसा एक कीडा पख फडफडाता हुआ आया और सामने, उसी पत्ते पर बैठ गया। बैठते ही उसके पख न जाने कहा अदृश्य हो गए। उसका शरीर सुन्दर, चमकते लाल रग का था, जिस पर काले-काले धब्बे थे। वह 'लाल गुबरैला' था। ढाल जैसे दो पखो के नीचे उसके अन्य दो पतले-झीने पख थे। उसका अग्रेजी नाम लेडीबर्ड बीटिल है। हम गोबर के गुबरैले (डग बीटिल) को पहले देख चुके हैं। याद है न? उसने गोबर के गोले से प्रोफेसर कबीर को गुफा मे बन्द कर दिया था।

लाल गुबरैले ने लता और दिलीप की ओर देखा और उनकी तरफ बढा। यह देखकर बच्चे डर गए और उन हरी गायो के झुण्ड की ओर भागे। लाल गुबरैला भी उसी ओर मुडा। बच्चे भय से चीख उठे। अब वे कहा भागें? पत्ते का छोर आ गया था। इतने ऊपर से वे नीचे भी नही कूद सकते थे। नीचे देखते ही उनकी आखो के सामने तारे नाचने लगे। साक्षात् मौत जैसा वह गुबरैला उनकी ओर झपटता आ रहा था। कितना सुन्दर! फिर भी कितना भयकर!!

बच्चे भयभीत होकर जोर से चीखे--"कबीर चाचा!"

प्रोफेसर ने जागकर जो यह दृश्य देखा तो खिलखिलाकर हँस पडे—"वाह रे मेरे बहादुरो! यहा आओ। वह तो लाल गुबरैला है। वह तुम्हे कुछ नही कहेगा, वह केवल उन हरी गायो को चूम लेगा।"

चकित होकर बच्चे प्रोफेसर के पास दौड आए और लिपट गए। लाल गुबरैला हरी गायो के पास पहुच चुका था। उसने एक गाय को पजा मारकर उलट दिया। फिर

ऊपर चढकर उसे कुचल डाला और उसके शरीर का सारा रस पी लिया। जिस तरह तुम आम चूसकर उसका छिलका फेंक देते हो, उसी तरह उसने उसे चूस कर अस्थिपजर फेंक दिया। वह एक नही, सभी गायो को चूस गया। जहा कुछ देर पहले हरी गायो का झुण्ड घूम रहा था, वहा अब उनके 'छिलके' हवा मे उड रहे थे।

यह सब देख कर बच्चो की घिग्घी बध गई। प्रोफेसर ने अपनी दाढी पर हाथ फेरते हुए कहा—"सब ठीक है। लाल गुबरैले बहुत उपयोगी कीडे हैं।"

"जो बेचारी हरी गायो को इस तरह मार डालता है, वह उपयोगी है?" लता गुस्से से बोली।

"हा, वे हरी गायें सीधी जरूर हैं, पर उनसे हमे बहुत नुकसान पहुचता है। वे वनस्पति का रस पीकर उसे सुखा देती हैं। वे हमारी फसल, सागभाजी, फल इत्यादि सबको खोखला कर देती हैं। इसीलिए उनकी आबादी कम करने के लिए ईश्वर ने ये लाल गुबरैले बनाए हैं।"

"आपकी बात तो बडी विचित्र है, चाचा!" दिलीप बोल उठा।

"नही! मेरी बात केवल सच है। विचित्र तो ईश्वर की कला है।"

ये बाते हो ही रही थी कि लाल गुबरैले ने अपनी ढाल ऊपर उठाई। उसके नीचे से पतले पख निकालकर वह उन्हे फडफडाने लगा। उसके एक पूंछ भी निकल आयी। चारो पखो को फडफडाता हुआ वह हेलीकोप्टर की तरह उड गया।

प्रोफेसर ने कहा—"चलो, अब हम भी कूच करे। देखो! दूर, वह रही लाल झडी।"

हरे कपडे, हरे छाते और मुसीबतें

सूर्य झुक आया था, फिर भी गर्मी बहुत थी। घास के जगल मे कबीर चाचा और बच्चे उस लाल झण्डी की दिशा मे चले जा रहे थे। घास के जगल मे छाह कहा से मिलती? ऊपर सिर फाडने वाली धूप और नीचे गर्म धरती। चलते-चलते वे पसीने से नहाने लगे। प्यास के मारे उनका गला सूखने लगा। आसपास राक्षसी कीडो की सरसराहटें सुनाई दे रही थी। ये साहसी वीर थकावट, गर्मी और प्यास के मारे इतने परेशान थे कि उन राक्षसो की ओर ध्यान देने की भी उन्हे फुरसत न थी।

आखिर रीता न रह सकी। उसने हाफते हुए, दीन चेहरा बनाकर कहा—"भैया, मुझे प्यास लगी है।"

बेचारा दिलीप! उसका गला भी पानी के अभाव मे सूख रहा था और जीभ तालू से चिपक गई थी। उसने प्रोफेसर से कहा—"चाचा, हमे प्यास लगी है।"

बेचारे प्रोफेसर! उनकी दशा भी उन बच्चो से अच्छी नहीं थी। किसी मोटी जन्तु के पेट मे जाने के बाद पानी नहीं पीना पडता है। 'हरी गायो' का मीठा रस (दूध) उन्होंने पेट भरकर पीया था। अब, ऐसे ताप मे, पेट की आग

अधिक पानी माग रही थी।

लेकिन पानी कहा है, यह किसी को नही मालूम था। प्रोफेसर ने कहा—"हम पानी की खोज मे ही जा रहे है। हिम्मत के साथ वढे चलो।"

वच्चो को कवीर चाचा मे श्रद्धा थी, पर सूर्य के प्रचण्ड ताप मे उनकी श्रद्धा पिघल गई। थकावट और प्यास मे वच्चो के पैर लडखडा रहे थे।

लता रोती हुई वोली—"चाचा, पानी…"

"तुम तो वडी वहादुर वेटी हो, पानी अव दूर नही होगा।"

कुछ दूर चलते ही लता लडखडाकर गिर पडी। प्रोफेसर ने तुरन्त उसे उठाया और धूल झाडकर ढाढस देते हुए कहा—"हमे पानी तक पहुचना ही चाहिए। पानी हमारे पास नही आएगा।"

थोडी दूर चलने के वाद दिलीप लडखडाया और गिर पडा। उसका गला वैठ गया था और उसकी दीन आँखें कह रही थी कि उसके गले मे 'पानी, पानी' ये शव्द घुट रहे है। आसपास कोई ऐसा पौधा भी न था जिस पर चढकर प्रोफेसर पानी की खोज मे दूर तक नजर घुमा सकते। उन्होने सोचा कि थकावट दूर करने के लिए कुछ देर आराम करना ही सब से अच्छा होगा। उन्होने छाया खोजकर वच्चो को विठाया और 'अव क्या किया जाए'—यह सोचते हुए आसपास देखने लगे। उसी समय सामने की एक टेकरी फटी। पीली किनारी और काले रग का एक वडा-सा कीडा उसमे से वाहर आया। उसके दो मूछें थी।

"बच गए! बच गए! पानी अधिक दूर नही है।" प्रोफेसर आनन्द और उल्लास से चिल्ला उठे।

"कहा है पानी? हमे दीजिए!" बच्चे एकदम छट-पटाकर बोले।

प्रोफेसर ने कहा—"मेरा यह दोस्त अभी-अभी धरती मे से निकला है और पानी मे ही गिरने वाला है। यह पानी का गुबरैला है। चलो, हम उसके पीछे-पीछे चले।"

बस जैसे पानी के गुबरैले ने अपने शरीर पर से धूल झाडी। घास के जगल मे रास्ता बनाता हुआ वह ट्रैक्टर की तरह आगे-आगे चलने लगा।

"चाचा! आपने कैसे जाना कि यह पानी मे गिरने वाला है?" बच्चो ने उत्साह मे भरकर पूछा।

प्रोफेसर ने कहा—"मैं इसकी आदतो को जानता हू। ये गुबरैले पानी की किसी वनस्पति पर अपने अण्डे चिपकाते है। जब अण्डो मे से कीडा निकलता है, तब वह पानी के किसी जीव पर बैठ जाता है। उसी जीव को खा-खाकर वह बडा होता रहता है। अन्त मे जीव मर जाता है और वह खाऊ, खूंखार कीडा पानी छोडकर धरती पर चला आता है। वह धरती के अन्दर घुस जाता है। वहा वह पानी के गुबरैले के रूप मे बदल जाता है। यह भी एक अजीब क्रिया है। जब यह कीडे से गुबरैला बन जाता है, तब इसी प्रकार धरती फोड-कर बाहर निकलता है और एकदम पानी मे जा गिरता है।"

बच्चो को इन बातो मे बहुत मजा आया। वे ताप, थकावट और प्यास सब भूल गए। लता ने पूछा—"पर इसे मालूम कैसे होता है कि पानी कहा है?"

कबीर ने कहा—"उसे यह प्रेरणा प्रकृति देती है। तू ही बता कि शीत ऋतु के जो पक्षी यूरोप, उत्तरी एशिया और हिमालय से जाडो मे हमारे यहा आते हैं, उन्हे कैसे मालूम होता है कि दक्षिण के देशो मे जाने का समय हो गया है? उन्हे रास्ता और दिशा कौन बताता है? यह प्राकृतिक प्रेरणा ही तो है जिसके अनुसार वे ग्रीष्म मे अपने देश को वापस चले जाते हैं। उसी प्रकार यह पानी का गुबरैला भी हमेशा पानी की ही दिशा मे जाता है।"

बातें करते हुए चलने से रास्ता छोटा लगने लगता है। बच्चों को थकावट और प्यास भूलते देखकर प्रोफेसर को और भी उत्साह आया। उन्होने आगे कहा—"पानी के गुबरैले हवाई-जहाज़ हैं, समुद्री जहाज़ हैं, पनडुब्बी है और भूमि पर चलने वाली गाडी भी हैं।"

"सचमुच?" लता बोल उठी।

"वह किस तरह?" दिलीप ने पूछा।

"तुम अभी उसे भूमि पर चलने वाली गाडी की तरह जाते हुए देख रहे हो। अब जब वह पानी मे गिरेगा, तो जहाज की तरह तैरेगा, पनडुब्बी की तरह डुबकी लगाएगा, तारपीडो की तरह हमला करेगा! वह ट्रैक्टर की तरह जमीन पर चलता है और विमान की तरह हवा मे भी उडता है। ईश्वर की सृष्टि मे जो अगणित विचित्र प्राणी है, उनमे से एक यह भी है।"

"पानी! पानी! पानी!" दिलीप आनन्द से चीखा।

"पानी!" लता दौडी।

सामने पानी का किनारा था। पानी के गुबरैले ने उसमे

छलाग लगा दी थी। बच्चो को अब गुबरैले मे कोई दिलचस्पी न थी। वे पानी मे घुस गए। भरपेट पानी पिया, खूब नहा-कर थकावट, गर्मी और पसीने से छुटकारा पाया। पानी से बाहर निकलने के बाद प्रोफेसर ने कहा—"अब तुम दोनो को अच्छे कपडो और अच्छे छातो की जरूरत है।"

दिलीप ने कहा—"वे तो घर पहुचेंगे, तभी मिलेंगे।"

प्रोफेसर ने हँसकर कहा—"नही! मैं अभी तेरे लिए पैंट-कमीज और लता के लिए फ्राक ला देता हू। मैं अचकन पहनूंगा और हम मे से प्रत्येक एक-एक हरा छाता भी रखेगा, जिससे ताप न लगे।"

बच्चे अचम्भे मे आकर उन्हे देखने लगे।

प्रोफेसर ने किनारे उगी हुई हरी वनस्पति दिखाकर कहा—"तुमने ब्राह्मी का नाम तो सुना है न?"

दिलीप बोला—"हा, हा! मा उसका तेल बनाती है।"

प्रोफेसर ने कहा—"पानी के गीले किनारे पर उगी हुई यह ब्राह्मी वनस्पति है। हमारे पूर्वज जगलो मे बसा करते थे और छाल पहनते थे। आज हम भी वनस्पति के पत्तो के कपडे पहनेंगे।"

प्रोफेसर एक चतुर दरजी भी निकले। उन्होने थोडी ही देर मे बच्चो के और अपने वस्त्र बना लिए। ब्राह्मी के पत्ते तोडकर उन्होंने अपने-अपने माप का एक-एक छाता भी बना लिया। हरी पोशाक और हरे छाते से सज्जित होकर वे चलने लगे।

शाम को वातावरण बदलता-सा मालूम हुआ। पूर्व मे बादल दिखाई दिए और ठडी हवा बहने लगी। ठडी ह

हमारे मुसाफिरो को कुछ राहत तो मिली, पर साथ ही प्रोफे-सर को चिन्ता भी होने लगी। यदि बारिश हुई तो एक नई आफत आ पडेगी। आकाश मे काले बादल घुमड रहे थे।

एक जगह, झाड की जडो के पास, छोटे-छोटे काले मकोडे तेजी से बिल बना रहे थे। मिट्टी के छोटे-छोटे कण अन्दर से लाकर वे बिल के आसपास की दीवार ऊची कर रहे थे। एक जगह वे अपने मुह मे कुछ उठाकर बिल के अन्दर घुस रहे थे।

दिलीप को कौतूहल हुआ। उसने पूछा—"इन छोटे मकोडो के मुह मे क्या है?"

प्रोफेसर बोले—"इस जाति के मकोडे बहुत शान्त होते हैं। हम उन्हे कीडो की दुनिया के किसान और गडरिए कह सकते है। हमने उस झाड पर 'हरी गायें' देखी थी न? उन 'मोलो' नामक कीडो को ये पालते हैं और उनका दूध (रस) पीते है। अभी ये मकोडे अनाज के दाने और हरे पत्तो के टुकडे बिल मे ले जा रहे हैं। बिल के भीतर, नमी मे एक प्रकार की वनस्पति उगती है, जिसे खिलाकर ये मकोडे 'मोलो' कीडो को पालते हैं।"

बच्चे यह बात सुनकर बोले उठे—"तब तो इन्हे सचमुच किसान और गडरिए ही कहना चाहिए!"

एक अन्य झाड के पास छोटे मकोडो के घरो का एक झुण्ड-सा था। पिरामिड जैसे आकार की, मिट्टी की बनी इमारतो की मानो वह एक नगरी थी। उसमे रास्ते थे, खिडकिया थी, दरवाजे थे। वहा सैकडो काले मकोडे मुह मे कोई सफेद वस्तु उठाकर दौड-धूप कर रहे थे।

प्रोफेसर वोले—"ये सव वाते देखकर ऐसा लगता है कि वारिश शीघ्र होगी।"

"वह कैसे ?" दिलीप ने पूछा।

प्रोफेसर ने कहा—"जव वारिश होने वाली होती है, तव ये छोटे मकोडे अपने अण्डे विल मे छिपाकर, विल का दरवाजा भीतर से वन्द कर देते है।"

यह वातचीत हो रही थी कि दूर कुछ खडखडाहट सुनाई दी। कवीर चाचा सावधान हो गए। खडखडाहट पास आती जा रही थी।

दिलीप ने पूछा—"क्या वारिश नजदीक आ रही है ?"

चिन्तातुर कवीर ने कहा—"नही, यह आवाज वारिश की नही। मुझे यह आवाज अच्छी नही मालूम पडती।"

सूखे पत्तो मे होती सरसराहट क्रमश पास आ रही थी। अन्त मे एक खाई मे से किसी सेना के सैनिक झपटकर आते दिखाई पडे। वे वाघ जैसे क्रूर, शक्तिशाली और विकराल थे।

"लाल मकोडे !" प्रोफेसर भय से वोल उठे।

प्रोफेसर ने वच्चो के साथ किसी ऊची जगह पर चढ जाना ही उचित समझा। ऊचाई से उन्होने देखा कि लाल मकोडो की सेना ने काले मकोडो की सेना पर आक्रमण कर दिया है। अपनी जाति, इमारतें, धन-दौलत और वच्चो की रक्षा के लिए काले मकोडे जान की वाजी लगाकर लडे, पर शेर जैसे विकराल और शक्तिशाली लाल मकोडो के सामने वे हार गए। जगह-जगह मरे हुए और घायल छोटे काले मकोडे पडे थे। अव लाल मकोडे उनकी 'इमारतो' मे घुस गए और वहां से काले मकोडो के अण्डे उठाकर वाहर लाने लगे।

लता ने पूछा—"वे यह क्या कर रहे हैं ?'

प्रोफेसर ने कहा—"इन कमजोर काले मकोडो को हराने के बाद अब वे उनके अण्डे ले जा रहे हैं। अण्डो मे से जब बच्चे निकलेगे, तब लाल मकोडे उन्हे अपने गुलाम बनाएंगे।"

"क्या ?" दिलीप गुस्से मे भरकर बोला, "इस स्वतत्र युग मे भी ये गुलाम बनाते हैं ? लता ! तू खडी-खडी देखती क्या है ?"

दिलीप ने पत्थर उठाकर लाल मकोडो पर फेका। लता ने भी यही किया। प्रोफेसर चौंक उठे। वह चिल्लाए—"अरे, अरे, यह क्या करते हो ? वे हम पर हमला कर देंगे तो जान बचानी मुश्किल हो जाएगी।"

पर लाल मकोडो के अत्याचार से क्रोधित बच्चे उन पर पत्थरो की वर्षा करने लगे। यह देखकर प्रोफेसर को भी जोश चढा। बच्चे निशाना लगाने मे माहिर थे। लाल मकोडो की सेना मे पहले तो घबराहट फैली, फिर रोष। उन्होने पत्थर फेंकने वालो की दिशा मे हमला कर दिया। बच्चो और प्रोफेसर ने उनकी अगली कतार पर जोरो से पत्थर चलाए, पर मकोडो का आक्रमण न रुका। ये तीनो वीर पीछे हटते गए और पत्थर चलाते गए। अन्त मे ये थककर हाफने लगे। दुश्मन बहुत नजदीक आ पहुचा। प्रोफेसर चीखे—"भागो ! दौडो ! जान बचाओ !"

वह क्षण सचमुच भयकर था। वे भागे और खून के प्यासे, शेर-से विकराल लाल मकोडो की सेना ने उनका पीछा किया। वे भागते रहे, लेकिन कहा तक भागते ? वे थक गए और हाफने लगे। इधर आकाश मे बादल घिर र॰

थे और वर्षा शुरू होने से पहले ही उन्हे कही आसरा भी खोज लेना था। पर वे दुश्मन उनका पीछा छोडें तब न? उनके पजे मे जो पड जाता है, वह बहुत बुरी मौत मरता है। शरीर की जगह उसकी केवल अस्थिया शेष रह जाती हैं। यह विचार आते ही कबीर चाचा काप उठे। वह फिर भागे, पर लता और दिलीप के पैरो मे अब शक्ति नही थी। प्रोफेसर उन्हे हाथ पकडकर घसीटने लगे, लेकिन अब वह खुद भी थककर चूर हो गए थे। कितनी ही बार वह लडखडाए, कितनी ही बार गिरे, फिर भी उस विकराल सेना और अपनी करुण मृत्यु के भय से वह फिर उठे, फिर भागे।

"मारे गए! सामने नदी है! अब कहा भागेंगे?" दिलीप चीख उठा।

"ओ मा!" लता रोने लगी।

मकोडो की सेना बिलकुल नजदीक थी। किसी भी क्षण वह उन्हे पकड लेगी

"भागो, भागो, जान प्यारी है तो भागो!" प्रोफेसर पागलो की तरह चीखे। भागने की और कोई जगह न सूझी तो वह बच्चो के हाथ पकडकर नदी मे कूद पडे। प्रोफेसर कबीर लता और दिलीप तेजी से नदी पार कर सामने के किनारे पर चढ गए। वे थककर चूर हो चुके थे। वे बुरी तरह हाप रहे थे। लता आगे न चल सकी, वही बैठ गई। यह देखकर दिलीप बोला—"अरे! बैठ क्यो गई? भाग!"

"अब भागने की जरूरत नही है," कबीर चाचा ने छुटकारे की सास खीचकर जरा हँसते हुए कहा—"ये अफ्रीका के [illegible] मकोडे नही है जो नदी को भी तैरकर पार कर

जाए। देखो, वे पानी के उसी किनारे रुक गए हैं और गुस्से से टहल रहे हैं।"

दिलीप ने पूछा—"तो क्या अफ्रीका के सैनिक मकोड़े नदी को भी तैर जाते हैं?"

कबीर चाचा ने कहा—"हां, वे एक-दूसरे से चिपककर पानी के ऊपर पुल बनाते हैं, जिसके ऊपर से उनकी सारी सेना नदी पार कर जाती है।"

"सैनिक मकोड़े इन लाल मकोड़ों जैसे ही भयंकर होते होंगे?"

"उनसे भी भयंकर! बहुत बड़ी सेना बनाकर वे जंगल में घूमते हैं। वे जिस मनुष्य, ढोर, जंगली पशु या झोपड़ी को घेर लेते हैं, उसका बच रहना असम्भव हो जाता है। उनके खाए हुए मनुष्य, ढोर और जंगली पशुओं के अस्थिपंजर अकसर मिलते रहते हैं।"

"ओह!" दिलीप बोला उठा—"जिन कीड़ों को हम तुच्छ समझते है, वे कितने भयंकर और समर्थ हैं!"

कुछ देर आराम करके यह त्रिपुटि फिर आगे बढ़ी। पूर्वी आकाश में बादल चढ़े आ रहे थे। बिजली चमक रही थी, ठंडा पवन फूंक रहा था। प्रोफेसर ने कहा—"यह भी एक आफत है। यदि वर्षा हुई तो उसकी बूंदें हमें धरती में जिन्दा गाड़ देने के लिए काफी हैं। हमें शीघ्र ही कोई आश्रय खोज लेना चाहिए।"

वे ऊंचे चढ़ने लगे, लेकिन यहां सारी धरती नम थी। वे तीनों एक खाई से गुजर रहे थे, जिसका किनारा बहुत ऊंचा न था। एक जगह नमी के कारण वनस्पति सड़ गई थी। वहां



से एक बडा कुकुरमुत्ता उग आया था। उस पर नज़र पडते ही प्रोफेसर कबीर हर्ष मे बोल उठे—"बच गये। ईश्वर ने हमारे ही लिये यह विशाल छत्ता बना रखा है। चलो, हम उसके नीचे पहुच जाए।"

चमकीली गुफा मे

[illegible] मे 'तडडड' की आवाज हुई। मेघ राजा की सवारी आ रही थी। असल मे [illegible] गिरने की ही वह आवाज थी। दिन मे

भी आँखे चौंधिया देने वाली बिजली चमकी। कबीर चाचा ने कहा—"देखना, चौंकना नही! अभी कान फाडने वाली गर्जना होगी।"

"आपने कैसे जाना?" लता ने पूछा।

"पहले तुम दौडो और कुकुरमुत्ते के नीचे घुस जाओ। बाहर रहने मे खतरा है," कबीर ने कहा और बच्चो के हाथ पकडकर दौड लगाई।

तडतडाने की आवाज़ पास आती जा रही थी। बिलकुल ठीक समय पर वे कुकुरमुत्ते के नीचे घुस गए। दूसरे ही क्षण वर्षा की विशाल बूदो की झडी लग गई। कबीर चाचा ने ठीक कहा था। वे बूदें यदि इन तीनो पर गिरती, तो ये ज़िन्दा ही ज़मीन मे गड जाते। इसी समय कान फाडने वाली मेघ-गर्जना हुई। न जाने कब तक उसकी प्रतिध्वनिया उठती रही।

ठडी हवा मे, कुकुरमुत्ते के नीचे बच्चो को अपनी आड मे लेते हुए चाचा ने कहा—"लता, अब मैं तेरे प्रश्न का जवाब दूगा। आकाश मे बिजली और उसकी गर्जना लगभग एक ही समय होती है। परन्तु प्रकाश की गति एक सेकण्ड मे ८६,००० मील है, जबकि ध्वनि की गति मात्र १,१०० फीट। इस लिये बिजली को हम चमकते पहले देखते हैं और गर्जना उसके बाद सुनते हैं। जब मैंने ऐसी शक्तिशाली बिजली चमकते देखी, तो उसी क्षण मैं समझ गया कि शीघ्र ही जबर्दस्त मेघगर्जना भी होगी।'

"आप भी अजीब है, कबीर चाचा!" लता बोल उठी।

"नही, बेटी! मैं अजीब नही हू, ऐसी अजीब सृष्टि बनाने

वाला ईश्वर अजीब है।"

"इस समय हम किसके नीचे बैठे है?" दिलीप ने पूछा।

"यह मेढक का छत्ता है।"

"क्या! मेढक का छत्ता? मेढक को भला छत्ते की क्या जरूरत?"

प्रोफेसर ने हँसकर कहा—"नही, सचमुच मेढको को छत्ते की कोई जरूरत नही। यह तो केवल इसका नाम है। इसे 'कुकुरमुत्ता' या 'कुत्ते का कान' भी कहते है, पर कुत्ते के साथ भी इसका कोई सम्बन्ध नही। यह तो एक प्रकार की वनस्पति है।"

"पर वनस्पति तो हरी होती है न! यह तो सफेद है।"

"हा, जिस वनस्पति मे हरित द्रव्य (क्लोरोफिल) होता है, वह हरी होती है, जिसमे नही होता, वह दूसरे रग की होती है। तुमने अपने बगीचे मे लाल रग की वनस्पति नही देखी क्या? इस कुकुरमुत्ते मे हरित द्रव्य नही होता। किसी भूमि मे वस्तु के सडने से यह पैदा होता है। गरीब लोग इस का साग बनाकर खाते है, पर इसमे सावधान रहने की जरूरत है। कई कुकुरमुत्ते जहरीले भी होते है।"

"तब तो मै इसका साग कभी नही खाऊगा।" दिलीप ने कहा।

"मेरा पेट भी हरी गायो के दूध से भरा है," लता बोली।

मूसलाधार पानी गिर रहा था। क्रमश पानी कुकुरमुत्ते पर टपकता जा रहा था। दृश्य बडा डरावना था। बिजली की और मेघ की गर्जना मूसलाधार वर्षा और धुधला वातावरण। प्रोफेसर को डर लगा कि कही पानी और भी अधिक

न चढ जाए। यहा से कही और जा सकने की सम्भावना नही थी। बच्चे ठड के मारे कापने लगे। प्रोफेसर के घुटनो तक पानी आ गया। अब क्या होगा ?

पानी बच्चो की कमर से ऊपर तक जा पहुचा। उसका जोर और भी बढ गया। अब शीघ्र ही कुछ करना चाहिए, वरना बच्चे बह जाएगे। कबीर ने एक नुकीला ककड खोज कर कुकुरमुत्ते के तने मे एक गड्ढा-सा बनाया और बच्चो को उठाकर उसमे बिठा दिया। बच्चो ने छुटकारे का दम लिया। पर उस गड्ढे मे कबीर चाचा न समा सके। वह ठड से कापते हुए पानी मे ही खडे रहे।

वर्षा का जोर बढता गया। पानी की सतह भी ऊची होती गई। बहकर आती लकडिया प्रोफेसर के पैरो मे टकराकर उन्हे घायल कर रही थी। बच्चो ने कबीर चाचा की दुर्दशा देखी। वे घबराने लगे। पानी कमर तक आ गया। ठड से अकडे हुए हाथो से प्रोफेसर कबीर कुकुरमुत्ते के तने से लिपट गए। पानी के तेज बहाव के कारण अब वह धरती पर पैर भी नही टिका पा रहे थे।

अन्त मे प्रोफेसर कबीर को लगा कि अब उन्हे बहने से कोई नही बचा सकता। कुकुरमुत्ते का तना उनके हाथो से छूटता जा रहा था। क्या सचमुच वह मारे जाएगे ? बच्चो का क्या होगा ? उन्होने कहा—"बेटा दिलीप, लता ! यदि मैं बह जाऊ तो तुम दोनो घबराना नही। किसी भी तरह उस लाल झण्डी तक पहुच जाना। वहा पेटी मे पाउडर रखा है, जिसके खाने से तुम फिर से पहले-जितने बडे हो जाओगे। वहा से आगे सडक पर चलोगे तो तुम्हे बिहार सरो-

घर का रास्ता मिल जाएगा। वहा से पवई होते हुए तुम घर पहुच जाओगे ”

लता और दिलीप ने उनकी आधी बात सुनी, आधी नही सुनी। उनकी आखो मे आसू भर आए। दिलीप ने कहा—“बहन ! दु ख मे ईश्वर से प्रार्थना करनी चाहिए। केवल वही हमे बचा सकता है। हमारे पुराणो की कथा मे भी यही लिखा है, तू भूल गई क्या ?”

भाई-बहन ने आखें बन्द कर ली और हाथ जोडकर प्रार्थना करने लगे। ऊपर आकाश मे पानी गिर रहा था, नीचे नदी मे बाढ आयी हुई थी और इधर बच्चो की आखो मे भी आसुओ की बाढ आ गई। सचमुच चमत्कार हुआ। वर्षा बन्द हो गई। वर्षा शुरू होते समय जो तडतडाहट सुनाई दी थी, वैसी ही तडतडाहट वर्षा बन्द होने पर भी सुनाई दी, जो कही दूर जाकर विलीन हो गई। थोडी ही देर मे बाढ भी उतरने लगी।

“भैया,” लता ने हर्ष से गद्‌गद् होते हुए कहा—“ईश्वर ने हमारी प्रार्थना सुन ली।”

लता और दिलीप ने आसू पोछे। दोनो बच्चे नीचे उतर-कर फकीर बाबा से लिपट गए।

बादल बिखरने लगे। सूरज दादा प्रकाशित हुए। उनकी सुनहरी देह अब पश्चिम मे डूब रही थी। पानी पूरी तरह उतर गया और ये साहसी वीर आगे बढ चले। जो आसमान थोडी देर पहले उदास मालूम हो रहा था, वही अब [illegible] गुलाबी रग से रग गया। बच्चे खुश हो गए, पर दिलीप ने कहा—‘सध्या की इस गुलाबी के पीछे रात का

काला अन्धकार छिपा है। आज हमे इस जगल मे अपनी पहली रात बितानी है। अँधेरा होते ही रात के कीडे बाहर निकलेंगे। हमे उन राक्षसो से बचने के लिए कोई उपाय करना होगा।"

कबीर चाचा की बाते सुनकर बच्चो का आनन्द उड गया। वे गम्भीर होकर आश्रय की खोज करने लगे, परन्तु आश्रय मिलने के पूर्व ही अँधेरी रात दुनिया को निगल गई।

जगल भयकर हो उठा। झीगुर और अन्य जगली कीडो का सगीत शुरु हुआ। दूर से मेढको के टर्राने की आवाज आ रही थी। स्वच्छ आकाश मे तारे टिमटिमा रहे थे। भीगी धरती पर वे साहसी वीर आश्रय खोजते हुए इधर-उधर भटक रहे थे।

दिलीप आगे था। वह अँधेरे मे चिल्लाया—"चाचा, यहा घर है और दीपक भी है!"

एक झाड था, जिसकी जड के पास दिलीप ने तारो के झिलमिल प्रकाश मे एक गुफा देखी। उसमे एक दीपक भी था। वह कभी धीमा, कभी तेज हो रहा था। दिलीप यह देखकर गुफा के भीतर घुसा। भीतर उसे कुछ सरसराहट-सी मालूम हुई और वह चिल्लाता हुआ बाहर भागा—"चाचा! साप! साप!"

साप?

कबीर की आखो के सामने नाग, फूमी, गेहुअन, धामन आदि साप उभर आए। वह दौडते हुए आए और दिलीप उन से लिपट गया। जगल मे साप तो होते हैं, पर यह गुफा और उसमे यह दीपक कहा से आया? कबीर ने एक लकडी ली

और गुफा के मुंह के पास आए। सचमुच भीतर कोई दीपक था। उसकी रोशनी मे साप जैसी कोई चीज दिखाई दी। प्रोफेसर उसे देखकर खिलखिला उठे। उन्होने कहा—"दिलीप! तूने जगल मे रात बिताने के लिए एक धर्मशाला खोज ली है। धन्यवाद! यहा का रखवाला साप नही, बल्कि एक निर्दोष केचुआ है। हम उसे भगा देंगे और धर्मशाला का मालिक हमे रात भर रोशनी देता रहेगा।"

बच्चे कुछ भी न समझ सके। प्रोफेसर ने केचुए को धक्का मारा। वह बाहर भाग गया। प्रोफेसर ने हँसकर कहा—'केचुए साप नही हैं। वे बिना दात और आख के निर्दोष और उपयोगी जीव हैं। यदि उन्हे काट डालो तो एक केचुए से दो केचुए हो जाए।"

"सचमुच ?" बच्चे बोल उठे।

"हा, केचुए को काट डालने से हर टुकडा अलग-अलग केचुआ बन जाता है। ये जीव धरती मे रहते हैं और मिट्टी खाते हैं। शरीर के एक छोर से मिट्टी खाकर वे दूसरे छोर से निकालते और आगे बढते जाते है। उनके द्वारा छोडी हुई मिट्टी उत्तम खाद होती है। वे जमीन को पोली, मुलायम, [illegible] और उपजाऊ बनाते हैं।"

"बडी विचित्र बात है, चाचा! केचुए अधिक-से-अधिक कितने लम्बे होते हैं?" लता ने पूछा।

"दो फीट से लेकर चार फीट तक।"

[illegible] चार फीट! तब तो वह साप ही हो गया, [illegible] पहचान कि कौन साप है और कौन [illegible]

"हा, चाचा !" दिलीप ने भी कहा, "साप के बच्चे और केचुए मे किस प्रकार अन्तर जाना जा सकता है ?"

प्रोफेसर ने कहा—"यह जानना बहुत सरल है । यदि वह साप होगा तो बार-बार अपनी जीभ लपलपाता रहेगा, पर केचुए की तो जीभ भी नही होती । दूसरी पहचान, साप की चमडी मे परते-सी होती हैं (मछली के समान), परन्तु केचुए की चमडी बिलकुल चिकनी होती है।"

"अब समझ मे आ गया । कबीर चाचा, यदि आप यह पहचान हमे न बताते तो हम साप को केंचुआ मानकर जोखिम मे पड जाते और केंचुए को साप मानकर फिजूल ही डरते रहते ।" दिलीप ने कहा ।

"अभी तू केचुए ही से तो डर गया था !" कबीर ने हस-कर कहा ।

"वह तो ठीक है चाचा, पर यह 'दीपक' कहाँ से आया ?"

"वह दीपक नही, जुगनू की मादा है। जुगनू एक प्रकार का गुबरैला कीडा है । उसकी मादा के पख नही होते । वह इसी तरह अँधेरे मे चमका करती है । अच्छा है कि वह यही है। धर्मशाला मे हमे अब अँधेरा नही रहेगा। वह यहा मे जाएगी भी नही । उसके जाने का रास्ता हम बन्द कर दगे । चलो, अब हम सोने की तैयारी करें ।"

कबीर ने गुफा की जाच कर ली । गुफा के मुह पर उन्होने पत्तिया, घास-फूस, डालिया आदि रखकर उसे बन्द कर दिया । फिर घास-फूस की गद्दिया तैयार करके उन्होने कहा—' लाखो या करोडो वर्ष पूर्व हमारे पूर्वज जिस तरह गुफा मे सोते थे, उसी तरह आज हम भी सोएगे ।"

अमृत जैसा नाश्ता

कबीर चाचा तो लेटते ही खर्राटे भरने लगे, पर बच्चो को नीद नही आयी। गुफा से बाहर, आकाश मे शुक्र का तेजस्वी नक्षत्र दिखाई दे रहा था। भीतर जुगनू का प्रकाश था। बच्चो को घर याद आया, मा याद आयी, पिताजी याद आए। वे इस समय क्या कर रहे होगे ?

"मा अभी पिताजी को खाना खिला रही होगी," नादान लता ने कहा।

"तुझे बिलकुल अक्ल नही है!" दिलीप बोल उठा, "आज मा ने रसोई ही नही बनाई होगी। किसी ने कुछ भी नही खाया होगा। वे बार-बार किसी के आने की आवाज सुनकर चौक उठते होगे, पर हमे न देखकर निराशा से आहे भरते होगे।"

दिलीप की कल्पना बिलकुल ठीक थी। उस रोज शाम को अग्रेजी, मराठी, गुजराती, हिन्दी—सभी अखबारो मे लता, दिलीप और प्रोफेसर कबीर के अनोखे ढग से गायब हो जाने की खबरे छपी थी। साथ ही तीनो की तसवीरें भी प्रकाशित हुई थी। उन्हे खोजने वाले के लिए बड़ा भारी इनाम घोषित किया गया था। बम्बई और देश के अन्य अनेक पुलिस-थानो के बीच तार के सन्देश झनझना रहे थे। रेडियो पर भी इस घटना को बार-बार प्रसारित किया जा रहा था।

दिलीप ने कल्पना की कि अभी उनकी पालतू बिल्ली [illegible] पर सो रही होगी। मा पलग पर पडी सिसक रही होगी, [illegible] खिड़की मे से आकाश मे टकटकी लगाए देख

रहे होगे। लता को मालूम न हो, इस प्रकार दिलीप विना आवाज किए, चोरी-चोरी रोने लगा। लता इतनी थक गई थी कि रोने की इच्छा होते हुए भी वह न रो सकी। कुछ देर वाद दोनो वच्चे सो गए।

सुवह जव वे उठे तो कवीर चाचा गुफा मे नही थे। वाहर पक्षी चहचहा रहे थे और प्रोफेसर प्रभाती गाने मे मस्त थे। वच्चे वाहर दौड गए। वातावरण वडा सुहावना था। कवीर चाचा आग सुलगा कर कुछ भून रहे थे। वच्चो को देखते ही उन्होने हँसकर कहा—"ओहो, उठ गए दोनो ? जाओ, नदी-किनारे नित्य कर्मों से निपट लो। जव नहा-धोकर आओगे, तव तुम्हारे लिए नाश्ता तैयार होगा।"

"सचमुच ? क्या आप नाश्ता वना रहे है ?" लता के मुह मे पानी आ गया।

"हा, पर क्या वना रहा हू, यह अभी नही वताऊ गा। तुम्हे कल्पना के घोडे दौडाने का पूरा अवसर देना चाहता हू," प्रोफेसर ने कहा।

वच्चे जव नित्य कर्मों से निपटकर आए, तव तीन हरे पत्तो पर कुछ रखा हुआ था। एक वडे पत्थर को मेज वनाया गया था, तीन छोटे पत्थरो की कुर्सिया। नाश्ते मे काजू, शहद, वेर और नारियल थे। वच्चे चकित हो गए। यह सव कहा से आया, यह जानने की उन्हे वेहद उत्सुकता थी, पर उससे कही अधिक भूख उनके पेट मे थी। वे नाश्ते पर टूट पडे। कौर भरकर दिलीप ने पूछा—"चाचा ! जगल मे ऐसा सुन्दर नाश्ता कहा से आया ?"

प्रोफेसर कवीर ने हसकर जवाव दिया—"हमारे आस-

पास कुदरत ने सब कुछ दे रखा है। वह हम सबकी मा है। क्या खाएगे, क्या पहनेगे, कहा रहेगे ? इसकी चिन्ता मनुष्य व्यर्थ करता है। जगल मे रहने वाले कीडो के लिए घर नही है कोठिया नही है, कपडे और खाने का सामान नही है, परन्तु जिस वस्तु की उन्हे जरूरत होती है, सब उन्हे कुदरत देती रहती है। सुबह उठने के बाद पक्षी कभी यह फिक्र नही करता कि आज मैं क्या खाऊँगा। लेकिन रात को वह कभी भूखा नही सोता। जिसे जिस वस्तु की जरूरत होती है, उसे वह वस्तु कुदरत दे ही देती है। इसके लिए उससे मेहनत जरूर कराती है। बस।"

दिलीप ने पूछा—"पर हमारे नाश्ते मे जिन वस्तुओ की जरूरत थी, वे वस्तुए आपको मिली कहा से ?"

"वह सब यही था। कुदरत मैया कहती है कि खोजो और मिलेगा। मैंने खोजा और मुझे मिल गया।"

"परन्तु यह काजू ?" मुह मे काजू भरते हुए लता ने पूछा।

"यह सामने जो पेड है, वह काजू का ही है। कल वर्षा होने से [illegible] पके काज गिर पडे थे। काजू के फलो को भूने बिना उनमे से काजू नही निकलते, इसलिए मैं नदी किनारे से खोज कर चकमक लाया। चकमक से मैंने आग [illegible]

को सडाने से जला सकने लायक गैस पैदा होती है, यह तो तुम जानते हो न ? मैंने जब आग जलाई, तभी मुझे मालूम हुआ कि यहाँ नीचे से गैस आ रही है। जब आग दीपक की भांति जलने लगी तो मैं जान गया कि कुदरत ने यहा नाश्ता तैयार करने के लिए गैस का चूल्हा पहले से ही बना रखा है !"

"अजीब है कुदरत ! बेर तो आसपास मिल गए होंगे, पर ये नारियल और शहद कहाँ से मिले ?"

"जिस प्रकार जगल के दूसरे प्राणी खुराक खोजते हैं, उसी प्रकार मैंने भी खोजी और चीजे मिल गई। काजू के पेड पर से किसी ने शहद का छत्ता गिराया होगा। उसका एक टुकडा धरती पर पडा रह गया था। उस नारियल के वृक्ष को देखो ! उसमे से किसी ने नारियल तोडकर यहाँ फोडा था, जिसका एक टुकडा मुझे मिल गया। इस प्रकार हमारे नाश्ते के लिए श्रेष्ठ वस्तुएं प्राप्त हो गई ।"

"डबलरोटी और चाय के बजाए मुझे तो आज का नाश्ता ही ज्यादा पसन्द आया," लता ने कहा ।

"जिस प्रकार ये स्वाद मे मजेदार हैं, उसी प्रकार गुण मे भी अमृत के समान है," प्रोफेसर ने कहा।

अच्छी तरह पेट भर लेने के बाद बची हुई वस्तुए साथ ले जाने के लिए प्रोफेसर ने एक खाली शगी खोज ली । शगी थैली के बतौर इस्तेमाल की जा सकती थी। ये वस्तुए उन्हें इतनी अच्छी लगी थी कि वे उन्हे वही छोड जाने मे हिचक रहे थे। बच्चो ने कहा कि अब हम भोजन मे कुदरत की दी हुई अमृत जैसी वस्तुएँ ही खाएगे ।

नई मुसीबतो का जाल

अचानक कुछ फडफडाहट हुई और पवन के सपाटे मे उडने मे ये साहसी वीर बडी मुश्किल से बचे । प्रोफेसर ने देखा कि एक झाड की पत्ती के नीचे जखी की थैली लटक रही है और उसके ऊपर एक बडा पतगा फडफडा रहा है ।

प्रोफेसर के मस्तिष्क मे बिजली की तरह एक विचार आया । उन्होने कहा—"मैं सोचता हूँ कि अब तुम्हे अपने फटे हुए वस्त्र फेक देने चाहिए । मैं तुम लोगो को नए रेशमी वस्त्रो से सजाना चाहता हू ।"

"यहा रेशमी वस्त्र कहा मिलेंगे ?" बच्चो ने पूछा ।

"जब कुदरत शहरो तक रेशम भेजती है, तो क्या वह हमे यहा रेशम नही देगी ? देखो, उस पतगे ने तुम्हारे लिए रेशम बनाया है और अब वह उडने ही वाला है ।"

दिलीप ने कहा—"मै नही समझा ।"

"तितली के समान पतगे भी रेशम बनाते हैं, यह तुम जानते हो न ? ऐसे कीडो की चार अवस्थाए होती है । विशेष जाति के पतगो और तितलियो के बच्चे विशेष जाति की ही वनस्पति खाते है । जिस वनस्पति के पत्तो को उनके बच्चे खाएगे, उसी वनस्पति पर वे पतगे और तितलिया अण्डे देती है ।"

लगेगी। इल्ली के पैर नही है, पख नही है, सूड भी नही है। कुतरने के लिए उसके पास केवल जबडे है। सारा दिन वह खूब खाती है और तेजी से बढती रहती है। उतनी तेजी से उसके जबडे नही बढ पाते, अत वह छोटे जबडो को काट कर फेक देती है और नए, बडे जबडे उगाती है।"

"सचमुच ? आप तो बडी विचित्र बात बता रहे है।"

"हा, लेकिन वह सच है। जब इल्ली बढकर परिपक्व हो जाती है तब वह कुतरना बन्द कर देती है। उसकी दोनो करवटो पर खाने-से बने होते है। उनमे एक प्रकार का रस बनता है। उसके गले के दोनो ओर बारीक छिद्र होते है। वह रस उन छिद्रो मे से धागे के रूप मे निकलता है। बाहर निकलते ही हवा लगने से वह धागा सूखकर रेशम मे बदल जाता है। उस रेशम को इल्ली अपने शरीर के चारो ओर लपेटती जाती है और रेशम की थैली बनाकर उसमे सो जाती है। यह स्थिति शखी कहलाती है।"

"वाह, सोने के लिए कैसा मुलायम बिछौना होता होगा।" लता ने कहा।

"यह बात नही है कि उसमे वह केवल सोती है। उसमे रहकर वह तो एक नया ही अवतार लेती है। उसमे लगातार एक विचित्र परिवर्तन होता रहता है। कुछ समय बाद वही इल्ली पतगा या तितली बनकर शखी मे से बाहर निकलती है। तब उसके पख, पैर, मुह और सब अंग निकल आते है। कैसा विचित्र रूपान्तर होता है इसका! कहा इल्ली और कहा रगबिरगी तितली! और देखो, इतनी छोटी शखी मे कितना बडा पतगा समाया हुआ था! [illegible]



आँखो से देखे कोई यह मानने को तैयार ही न होगा कि वह इस छोटी-सी थैली मे से ही निकला है।"

"चाचा, आपकी बातें हमे ताज्जुब मे डाल रही हैं।"

"अभी तो और ताज्जुब मे पडोगे।" कहते हुए प्रोफेसर ने पतगे के उड जाने पर शखी की खाली थैली नीचे उतारी और औंधी कर दी। उसमे से कुछ रस नीचे गिरा।

"यह पानी कहाँ से आया ?" दिलीप ने पूछा।

"जिस प्रकार मकान बन जाने के बाद कुछ गारा बच रहता है, उसी प्रकार कुदरत की शखी मे पतगा बन चुकने के बाद इतना रस बच गया है। पतगा इसी रस से भीगा हुआ था, इसीलिए वह बाहर निकलकर पर सुखा रहा था।"

प्रोफेसर ने शखी मे से रेशम का एक धागा निकालकर दिलीप के शरीर पर लपेटा। दिलीप गोल-गोल घूमने लगा। रेशम निकल-निकलकर दिलीप के शरीर पर लिपटने लगा। थोडी ही देर मे बच्चे सुन्दर, चमकीले और मुलायम रेशमी कपडो से सज गए।

इस प्रकार पेट भरकर और नई पोशाक मे सजकर वे तीनो आगे चल दिए। दिलीप के मन मे पतगे की ही बात घुमड रही थी। रास्ते मे उसने पूछा—"चाचा! हमने उस पतगे के माँ-बाप तो आसपास कही देखे नही ?"

"चीटी, मकोडे और मधुमक्खी जैसे कीडो को छोड दे, तो कीडो के जगत मे माँ-बाप न अण्डे सेते है और न बच्चो का पालन-पोषण करते हैं। आश्चर्य की बात तो यह है कि शखी से निकलकर तितली या पतगा स्वय समझ जाता है

कि उसे कहाँ जाना है, क्या करना है, क्या खाना है। यह सब उसे कुदरत ही सिखाती और समझाती है।"

दोपहर तक धूप मे चलकर ये मुसाफिर थक गए। वे गर्मी से परेशान भी हो गए। मेहनत करने से भूख लगती है, इसलिए अब वे भूखे भी थे। लाल झण्डी कितनी दूर है, यह देखने के लिए वे एक टेकरी पर चढने लगे। टेकरी का चढाव बिलकुल सीधा था, इसलिए एक जगह मिट्टी और पत्थर खिसक जाने से तीनो मुसाफिर बिलकुल तली मे जा पड़े। वे धूल और कीचड से सन गए। गिरने की वेदना अनुभव करते हुए भी वे साहसी वीर कपडे झाडकर उठ खडे हुए। वातावरण को हल्का करने के लिए प्रोफेसर ने जोर से हँसकर कहा—"लता, तुम्हे भूख लगी थी न ? हम तीनो ने गुलाब छाप लड्डू खाया।"

दिलीप हँस पड़ा। रोनी-सी हो चुकी लता को भी उसके साथ हँसना पड़ा। प्रोफेसर ने खडे होकर देखा कि वे एक कुएँ जैसे गड्ढे मे आ गिरे है। गड्ढे की एक दीवार फूली हुई थी। प्रोफेसर ने फूली हुई जगह की जांच करके कहा—"दोस्तो, दोपहर के भोजन का समय हो गया है। नाश्ते की पोटली तो न जाने कहाँ उड गई, लेकिन मै तुम्हे उत्तम भोजन कराना चाहता हूँ।"

आंखो से देखे कोई यह मानने को तैयार ही न होगा कि वह इस छोटी-सी थैली मे से ही निकला है।"

"चाचा, आपकी बातें हमे ताज्जुब मे डाल रही हैं।"

"अभी तो और ताज्जुब मे पडोगे।" कहते हुए प्रोफेसर ने पतगे के उड जाने पर शखी की खाली थैली नीचे उतारी और औंधी कर दी। उसमे से कुछ रस नीचे गिरा।

"यह पानी कहाँ से आया ?" दिलीप ने पूछा।

"जिस प्रकार मकान बन जाने के बाद कुछ गारा बच रहता है, उसी प्रकार कुदरत की शखी मे पतगा बन चुकने के बाद इतना रस बच गया है। पतगा इसी रस से भीगा हुआ था, इसीलिए वह बाहर निकलकर पख सुखा रहा था।"

प्रोफेसर ने शखी मे से रेशम का एक धागा निकालकर दिलीप के शरीर पर लपेटा। दिलीप गोल-गोल घूमने लगा। रेशम निकल-निकलकर दिलीप के शरीर पर लिपटने लगा। थोडी ही देर मे बच्चे सुन्दर, चमकीले और मुलायम रेशमी कपडो से सज गए।

इस प्रकार पेट भरकर और नई पोशाक से सजकर वे तीनो आगे चल दिए। दिलीप के मन मे पतगे की ही बात घुमड रही थी। रास्ते मे उसने पूछा—"चाचा! हमने उस पतगे के माँ-बाप तो आसपास कही देखे नही ?"

"चीटी, मकोडे और मधुमक्खी जैसे कीडो को छोड दें, तो कीडो के जगत मे माँ-बाप न अण्डे सेते है और न बच्चो का पालन-पोषण करते हैं। आश्चर्य की बात तो यह है कि शखी से निकलकर तितली या पतगा स्वय समझ जाता है

आँखो से देखे कोई यह मानने को तैयार ही न होगा कि वह इस छोटी-सी थैली मे से ही निकला है।"

"चाचा, आपकी वातें हमे ताज्जुब मे डाल रही है।"

"अभी तो और ताज्जुब मे पडोगे।" कहते हुए प्रोफेसर ने पतगे के उड जाने पर शखी की खाली थैली नीचे उतारी और औंधी कर दी। उसमे से कुछ रस नीचे गिरा।

"यह पानी कहाँ से आया ?" दिलीप ने पूछा।

"जिस प्रकार मकान वन जाने के वाद कुछ गारा वच रहता है, उसी प्रकार कुदरत की शखी मे पतगा वन चुकने के वाद इतना रस वच गया है। पतगा इसी रस से भीगा हुआ था, इसीलिए वह बाहर निकलकर पख सुखा रहा था।"

प्रोफेसर ने शखी मे से रेशम का एक धागा निकालकर दिलीप के शरीर पर लपेटा। दिलीप गोल-गोल घूमने लगा। रेशम निकल-निकलकर दिलीप के शरीर पर लिपटने लगा। थोडी ही देर मे बच्चे सुन्दर, चमकीले और मुलायम रेशमी कपडो से सज गए।

इस प्रकार पेट भरकर और नई पोशाक से सजकर वे तीनो आगे चल दिए। दिलीप के मन मे पतगे की ही वात घुमड रही थी। रास्ते मे उसने पूछा—"चाचा! हमने उस पतगे के माँ-वाप तो आसपास कही देखे नही ?"

"चीटी, मकोडे और मधुमक्खी जैसे कीडो को छोड दें, तो कीडो के जगत मे माँ-वाप न अण्डे सेते है और न बच्चो का पालन-पोषण करते हैं। आश्चर्य की वात तो यह है कि शखी से निकलकर तितली या पतगा स्वय समझ जाता है

तैयार रखा है।"

तीनो बहादुर दीवार तोडने लगे। उसके टूटते ही भीतर से एक मीठी खुशबू आयी। वहाँ अण्डे जैसी कोई चीज थी और उसी के पास एक गोला रखा हुआ था। प्रोफेसर ने उसे उठा लिया और बच्चो को चखाया।

"अरे, वाह! कितनी सुगन्धित और मीठी वस्तु है यह! आखिर यह है क्या?"

"यह पराग और शहद का गोला है। हमने जो फूली हुई दीवार तोडी है, वह बर्र का 'घर' है। दूसरी चीज है उसका अण्डा। बर्र मिट्टी का घर बनाकर उसके भीतर अण्डा देती है। अण्डे मे से निकलने वाली इल्ली के खाने के लिए उसकी माँ पराग और शहद का गोला बनाकर 'घर' मे रखती है। इसके बाद वह घर को बाहर से बन्द करके उड जाती है। जब अण्डे मे से इल्ली निकलती है, तब इसी गोले को खाकर बडी होती है"

"ओ, मा! तो क्या हम बर्र के घर के पास बैठे है? वह आएगी तो हमे मार डालेगी!" भयभीत लता के मुह का कौर वैसा-का-वैसा रह गया।

"नही! बर्र नही आएगी। घर बन्द करके उड जाने के बाद मा का कर्तव्य पूरा हो जाता है। उसका बच्चा पुख्ता बर्र बनने पर मिट्टी का घर तोडकर खुद-ब-खुद बाहर निकलता है। इसलिए अभी तुम जरा भी डरे बिना भर-पेट भोजन कर लो।"

"सचमुच कुदरत मैया ने हमे अमृत-जैसी वस्तुए दी है।" कौर भरता हुआ दिलीप बोल उठा।

दि   ली   प भै   या   ।”

कही से जवाब न मिला ।

राक्षसी कीडे हवा मे उड रहे थे। जिन्हे देखकर मनुष्य ने हवाई-जहाज बनाना सीखा है, वे कीडे इतनी तीव्रता से पख फडफडा रहे थे कि मालूम ही न होता था कि उनके पख भी हैं।

लता रो रही थी, चीख रही थी। उसी समय किसी राक्षस का झपट्टा लगने से वह उछलकर गिर पडी। उस राक्षस ने घूमकर उसकी ओर देखा। लता भय से काप उठी। वह चीख भी न सकी। उसे लगा कि यह राक्षस अभी उसे खा जाएगा। उसकी आखें भयकर थी। वह लता पर मडरा रहा था। परन्तु सौभाग्य से वह चला गया। लता उठी। भय से उसका शरीर पसीने से नहा रहा था। जान बचाने के लिए वह सरपट भागी।

लेकिन वह अधिक दूरी तक न जा सकी। किसी ने उसे पीछे से पकडकर उठा लिया। दूसरे ही क्षण धरती उससे दूर जाती मालूम पडी। लता आकाश मे उडने लगी। वह तडपी, चीखी, पर ज्यो-ज्यो उसने छूटने का प्रयत्न किया, त्यो-त्यो सीग जैसे चमकते हुए किसी के हाथो ने उसे और अधिक दबोच लिया। हवा मे तीव्रता से फडफडाते हुए उस जन्तु के पखो की गुनगुनाहट और पवन के सपाटे मे लता की चीखे डूब गई। उसने उन हाथो को काटने का प्रयास किया, पर सीग जैसे चिकने, काले हाथो पर वह काट भी न सकी।

लता निराश हो गई। उसका गला भर आया। फिर वह रो पडी। उसने सिसकते हुए सोचा, ‘बस, अब मैं मर

जाऊगी । मैं किस जगह मरी, किसके हाथ मरी—कोई नही जानेगा । माँ पिताजी दिलीप भैया चाचा '

अपनी सारी शक्ति बटोरकर लता ने एक बार फिर कोशिश की । उठाकर ले जाने वाले राक्षस की छाती मे उसने जोर से अपना सिर दे मारा । पकड जरा ढीली हो गई । लता को लगा कि वह गिर रही है । ज़मीन पास आती जा रही थी । लता की आखो के सामने अँधेरा छा गया । राक्षस के दोनो हाथो ने उसे और अधिक ज़ोर से मसल दिया । भय से लता ने आखे बन्द कर ली । वह धडाम से गिरी । जब उसने आखें खोली तो कबीर चाचा उसे अपने हाथो मे लिए हुए थे ।

"चाचा ! सचमुच आप है ?" लता हर्ष से बोल उठी ।

"मेरी प्यारी बिटिया ! मैं ही हू," कबीर चाचा ने उसे प्यार से थपथपाते हुए कहा ।

"और मैं भी यही हू," अँधेरे मे दिलीप बोल उठा ।

"पर हम है कहा ?" लता ने पूछा ।

'बर्र के घर मे ! अभी वह आएगी और हममे से प्रत्येक को डक मारकर बेहोश कर देगी । फिर वह बाहर निकलकर ऊपर की छत बन्द कर देगी । हम यहा कैद हो जाएगे । यहा उसके अण्डे है, जिनमे से इल्ली निकलेगी और हमें खा जाएगी ।"

कबीर चाचा की बात सुनकर लता की खुशी छू हो गई ।

प्रोफेसर कबीर ने कहा—' घबराने से हम जिन्दा नही बचेगे । साहस के साथ कोशिश करने से ही हम जीवित रह

सकते हैं। वर्र के वापस आने से पहले ही हमे भाग जाना चाहिए। मैं यहा खडा रहकर तुम दोनो को ऊपर चढाता हू।"

"और आप ?" दिलीप ने पूछा।

"बात करने का समय नही है। हर क्षण कीमती है। यदि वर्र आ पहुची तो हमारी मौत निश्चित है," प्रोफेसर ने दिलीप को अपने कन्धो पर चढाते हुए कहा।

प्रोफेसर के सिर पर चढने के बाद भी दिलीप के हाथ छत तक नही पहुचे। प्रोफेसर कबीर ने बाहे ऊँची करके दीवार के आधार पर अपनी हथेलिया जमाईं और दिलीप से कहा—"चढ जा!"

"फिर आप ?" दिलीप ने पूछा।

"बात करने का समय नही है। जल्दी चढ!"

दिलीप बन्दर जैसा चपल था। हथेली पर चढकर उसने छत का किनारा पकड लिया, फिर ऊपर चढ गया।

प्रोफेसर ने कहा—"शाबाश!"

अब लता की बारी आयी। छोटी होने के कारण, प्रोफेसर की हथेली पर चढने के बावजूद वह छत का किनारा न पकड सकी। वह डर के मारे कापने लगी। प्रोफेसर ने चिल्लाकर कहा—"दिलीप, तू छत के मुह पर लेट जा और हाथ बढा कर लता को ऊपर खीच ले।" यह उपाय कारगर रहा। दिलीप के सहारे से लता बाहर कूद गई। कुए जैसी गुफा के अन्धकार मे खडे प्रोफेसर से दिलीप ने पूछा—"चाचा, आप किस तरह चढेंगे ?"

"तेरे शरीर पर जो रेशम लिपटा है, उसे उगाडकर

रस्सी बना। उसका छोर नीचे लटकाकर मुझे दे दे। दूसरा छोर किसी जगह बाध दे।"

दिलीप ने प्रोफेसर की आज्ञा का तुरन्त पालन किया। थोडी ही देर मे कबीर चाचा ऊपर चढ गए।

लता ने पूछा—"हम कहाँ हैं?"

प्रोफेसर ने आसपास और नीचे देखकर कहा—"हम एक झाड की डाली पर हैं।"

बच्चे आसपास और ऊपर-नीचे देखकर बोले—"चाचा, एक महीने पहले पतझड के कारण किसी झाड पर पत्ती नही थी। आज इस पर हरियाली की बहार आयी हुई है। इसका क्या कारण है?"

प्रोफेसर समझाने लगे—"उस समय फूल आने की ऋतु थी। सेमल वगैरह कुछ झाड इतने कमजोर होते है कि वे पत्तो और फूलो दोनो का एक साथ पोषण नही कर पाते। अत जब उनमे फूल आने वाले होते है, तब पत्ते गिर जाते हैं और जब पत्ते आने लगते हैं तब फूल झड जाते है। अरे, हम ने बात करने मे कितना समय खो दिया। वर्रे किसी भी क्षण आ सकती है। हमे जल्दी भाग जाना चाहिए।"

उन्होंने नीचे देखा। उन्हे धरती इतनी गहराई मे धँसी [illegible] हुई, जैसे वे किसी ऊँची मीनार पर से नीचे देख रहे हो। [illegible] ने [illegible] शरीर पर से आधा-आधा रेशम निकाल [illegible] रस्सी बनाई और उसमे जगह-जगह गाँठे [illegible] रस्सी का एक छोर डाल से बाधकर दूसरा [illegible] दिया और लता से कहा—[illegible] बिटिया, [illegible]

"उई माँ !" लता नीचे देखकर काँपने लगी।

प्रोफेसर ने अधीर होकर कहा—"जल्दी कर! यदि इतना भी साहस न किया तो अभी वह राक्षसी आ पहुँचेगी और हम तीनो को बन्द कर देगी।"

लता को जैसे ही वर्र की याद आयी, उसने जल्दी से रस्सी पकडकर नीचे उतरना शुरू कर दिया। वह तेजी से सरकती हुई नीचे जाने लगी। उसका हृदय भय से धडक रहा था। पवन के सपाटो मे वह पेंडुलम की तरह झूलने लगी।

ऊपर से प्रोफसर उसे ढाढस देते रहे थे। लता के कानो के पास से हवा सरसराती हुई बही जा रही थी। लता के बाल फहरा रहे थे। ऊपर आकाश था, नीचे धरती। बीच मे झूलती लता कितने खतरे मे थी!

आखिर एक चौडी डाली पर वह उतर गई। अभी यहा से भी धरती बहुत नीचे थी। उसने ऊपर देखा। प्रोफेसर ने चिल्लाकर कहा—"रस्सी उसी डाल मे कही अटका दे।"

तेज हवा के कारण उतनी ऊचाई से आती सूचना लता बडी मुश्किल से समझ पायी। उसने आज्ञा का पालन किया। तुरन्त दिलीप रस्सी पर से सरकता हुआ नीचे उतरने लगा। वह तो बन्दर की तरह नीचे उतर आया। फिर प्रोफेसर उतरे।

उन्होने आसपास इस तरह नजर फेंकी, मानो किसी पहाड के शिखर पर से देख रहे हो। प्रोफेसर बोल उठे—"वह रही हमारी लाल झण्डी!"

लता ने उधर देखा और नि श्वास छोडते हुए कहा—"इतनी दूर! इस जिन्दगी मे तो हम वहा कभी नही पहुच

सकेंगे।"

प्रोफेसर ने हँसकर कहा—"अरी पगली! हम तीन महीने मे वहा जरूर पहुच जाएँगे।"

दिलीप ने शक ज़ाहिर किया—"यदि तीन महीने मे न पहुच सके तो वरसात लग जाएगी। हम सव वह जाएगे।"

प्रोफेसर ने दृढ आवाज़ मे कहा—"जो हिम्मत हार जाते है, वे सचमुच हार जाते है। हमे जीतना है। मुझमे विश्वास रखो। हमे वहा पहुचना ही है। फिर से वडे होकर हमे सवको आश्चर्यचकित कर देना है।"

प्रोफेसर की वातो से वच्चे उत्साह मे आ गए। दिलीप ने पूछा—"अव हम और नीचे कैसे उतरेंगे?"

"तने से होते हुए, मकोडो की तरह!"

'ओ मा! कितना सीधा उतार है!" लता काप उठी।

'जिनके पास हिम्मत होती है, उनके लिए कुछ भी असम्भव नही। तेनसिंह और हिलेरी २९,००० फीट से भी ऊचे शिखर एवरेस्ट पर चढ गए थे। क्या उन्हे मुसीवतो का सामना नही करना पडा होगा? हम तेनसिंह और हिलेरी की ही तरह इस 'एवरेस्ट' से नीचे उतरेंगे।"

सच?" तेनसिंह का नाम सुनते ही वच्चो मे वडा उत्साह आ गया।

प्रोफेसर ने रस्सी का एक छोर लता की कमर पर वाधा और दूसरा छोर अपनी कमर पर। वीच मे उन्होने दिलीप को वाध दिया। फिर कहा—'लता, अव तू नीचे उतरना शुरू कर। तुम दोनो मे से यदि किसी का पैर फिसलेगा, तो रस्सी का छोर मेरी कमर मे वधा होने से, तुम लोग लटकते रहोगे,

गिरोगे नही।"

करीब घटे भर तक उनका उतरना चालू रहा। एक अच्छी डाल मिलने पर वे आराम करने के लिए बैठ गए। तभी विशाल जबडे, बडी-बडी भयकर आखो और जगल जैसे घने बालो वाला एक प्राणी दिखाई दिया। लता चीखकर भागने लगी। प्रोफेसर ने हँसकर कहा—"डरो नही। तुम उसे थपथपाओगे तो वह तुम्हे कुछ भी नही करेगा।"

दिलीप बोला—"पर चाचा, उसके विकराल जबडे तो देखिए!"

"हा, परन्तु वे वनस्पति कुतरने के लिए हैं, शिकार करने के लिए नही।"

वह एक विकराल इल्ली थी, जो ऊपर चढ रही थी। दिलीप ने पूछा—"वह कहा जा रही है?"

प्रोफेसर ने कहा—"मौत से मिलने! वहा, ऊपर देखो।"

बच्चो ने देखा। पख फडफडाता हुआ एक जन्तु उडता आ रहा था। वह मक्खी और बर्र से भी बडा था। उसे देखकर बच्चे घबरा गए।

प्रोफेसर ने हँसकर कहा—"तुम्हे घबराने की जरूरत नही है। वह 'घुडसवार मक्खी' है।"

"तो क्या वह घोडे पर चढती है?"

"नही, लेकिन घुडसवार की तरह वह इल्लियो पर सवार अवश्य होती है। देखो!"

घुडसवार मक्खी उस इल्ली पर सवार हो गई। फिर अपने एक डक से उसने इल्ली के शरीर मे छेद कर दिया।

"अरे! वह यह क्या कर रही है?" दिलीप बोला।

"वह बिलकुल ठीक कर रही है। इल्लिया कभी-कभी टिड्डी की तरह बढकर समूचे जगल को उजाड देती है। इल्लियो को मर्यादा मे रखने के लिए ही ईश्वर ने यह घुड-सवार मक्खी बनाई है। यह मक्खी इस इल्ली के शरीर मे छेद बनाकर अपने अण्डे उसके भीतर रख देती है। अण्डे मे से इल्ली निकलने पर वह इस बडी इल्ली को जिन्दा ही खाने लगती है। बडी इल्ली शखी या तितली मे बदल जाए, इसके पूर्व ही घुडसवार मक्खी की छोटी इल्ली उसे खा जाती है। अन्त मे जब पूरी बडी इल्ली खा ली जाती है, तो घुडसवार मक्खी की इल्ली शखी मे बदल जाती है और वह भी यजमान के अस्थिपजर रूपी शरीर मे ही।"

"उफ! कितनी क्रूर और भयकर "

दिलीप का वाक्य अधूरा रह गया। जिस तरह विमान हवा मे डुबकी लगाता है, उसी तरह एक राक्षसी कीडा सपाटा मारता हुआ आया और कबीर चाचा के ऊपर बैठ गया। उसके पख के नीचे चाचा दब गए। बच्चे भय से काप उठे। प्रोफेसर भी पहले तो कुछ डरे, फिर हँसकर बोले—'घबराओ मत, मुझे कुछ नही होगा। यह हमे पकडने या खाने नही आया है।"

उस राक्षस ने अपनी नुकीली पूछ झाड की छाल मे धसाई। तेज छुरी की तरह उसकी पूछ छाल मे घुस गई। प्रोफेसर ने कहा— घुडसवार वर्र की यह दूसरी जाति है। [illegible] की पोल मे एक पतगे की इल्ली छिपी हुई है। इस वर्र ने [illegible] शरीर मे छेद कर अपना अण्डा उसमे रख दिया है। [illegible] ने [illegible] निकलेगी और पतगे की इल्ली का [illegible] [illegible] उसी से बडी भी होगी।"

बर्र उड गई। साथ ही बच्चो के चेहरे पर से घबराहट भी गायब हो गई। लता ने पूछा—"आपने कैसे जाना कि छाल की पोल मे इल्ली है? आपने देखी क्या?"

मैंने नही देखी और उस बर्र ने भी नही देखी, लेकिन जैसा मैंने कहा है, बिलकुल वैसा ही हुआ है। अब जल्दी नीचे उतरो। शाम होने लगी है और रात से पहले ही हमें पडाव डाल देना है।"

तेनसिंह और हिलेरी की तरह इन साहसी वीरो ने फिर नीचे उतरना शुरू किया। एक घटे के पश्चात जब वे धरती



पर पहुचे तो बहुत थक गए थे। वे पसीने मे डूब रहे थे।

वे जगल मे आगे बढे। रात हो गई थी, मगर तारो की रोशनी मे दिलीप को एक घर मिल ही गया। वह किसी इल्ली द्वारा पोला किया हुआ एक दाना था, जो नदी के पास ऊची जगह पर पडा रह गया था। ठण्ड बढ रही थी। उस दाने मे केवल बच्चे ही समा सके। प्रोफेसर ने उन्हे उसमे सुला दिया और खुद एक खाली घोघे मे घुस गए। दिन भर की थकावट के बाद तीनो घोडे बेचकर सोए। उन्हे मालूम नही था कि रात के अँधेरे मे लिपटकर एक खतरा उन पर आक्रमण करने वाला है।

ठण्डी हवा जोर-जोर से बहने लगी, लेकिन घर की गोद मे सोए हुए उन साहसी वीरो को खबर न हुई। लता और दिलीप का गोल घर पवन मे उडा और नीचे नदी मे जा गिरा। जब प्रोफेसर खर्राटे भर रहे थे और लता-दिलीप मा-बाप के पास पहुच जाने का स्वप्न देख रहे थे, दोनो बच्चो सहित उनका घर पानी मे बह रहा था। वे अपने प्यारे कबीर चाचा से दूर जा रहे थे।

आकाश मे चन्द्रमा चमक रहा था। जगल मे पवन सर्राटे भर रहा था। पानी मे लहरे उठ रही थी और गोला उन पर उछल रहा था। लता और दिलीप बहुत गाढी नींद मे थे, लेकिन जब तूफानी लहरो के ठण्डे छींटे अन्दर आए, तो दिलीप जाग गया। उसने लता को उठाया [illegible] बाहर [illegible] रहा है। चल, [illegible] जाए।"

[illegible] उधर जाने के मुह के पास [illegible]

उनका 'घर' पानी मे वहा जा रहा है। तूफान मे नदी उफन रही थी। वे घबराकर चिल्लाए—"चाचा! चाचा!"

हो-हो-हो! जवाब मे पवन गुर्राने लगा। ठण्डे पानी के छीटे बच्चो पर पडे। वे ठण्ड के मारे कापने लगे। उनकी घबराहट बढ गई। गोला लहरो पर उछला। बच्चे भीतर लुढक गए।

आकाश मे बादल दौड लगा रहे थे। जब चन्द्रमा उनसे ढक जाता तो वातावरण और अधिक डरावना हो जाता। झाडो के पत्ते और घास के जगल तेज झोको मे हचमचा रहे थे। रात भयकर थी। हर क्षण वे बच्चे अपने रक्षक प्रोफेसर से दूर घिसटे जा रहे थे।

एक बार फिर वे गोले के मुह पर चढे तो उन्होने देखा कि गोला बहने के बदले भवर मे पडकर गोल-गोल घूम रहा है। यदि इस भवर मे उनकी नौका डूबी तो साथ मे वे भी डूब जाएगे। ऐसे भवर को वे तैरकर पार नही कर सकेंगे।

रात बीती। जब सुबह की लालिमा फूटने लगी, तो तूफान रुक गया। भवर का वेग धीमा हुआ। गोला उसमे से छूटकर किनारे की ओर चला गया। दिलीप ने चिल्लाकर लता से कहा—"बहन, जल्दी बाहर कूद जा, नही तो हम फिर बह जाएगे।"

बच्चे उस जगल की सीमा पर इस तरह उतरे, मानो जहाज छोडकर किसी अज्ञात टापू के किनारे कदम रख रहे हो।

लता रोती हुई बोली—"अब कबीर चाचा हमे कहा मिलेंगे?"

दिलीप ने कहा—"मुझे चाचा पर पूरा विश्वास है। वह हमे छोडकर कही नही जाएगे। वह हमे जरूर खोज निकालेगे।" लता की कुछ हिम्मत बधी—"हम दोनो उन्हे चिल्लाकर पुकारे ?"

दोनो चिल्लाए। प्रतिध्वनि हुई। बच्चो ने कान लगाए। किसी के कदम सुनाई पडते है ? कोई जवाब देता है ? कही मे कोई जवाब नही आया।

दिलीप ने कहा—"मैं इस टेकरी पर चढकर पुकारता हू। तू सामने की झाडी मे जाकर चिल्ला। पर देखना, खो न जाना।"

लता दौडती हुई गई। थोडी देर बाद उसकी चिल्लाहट सुनाई दी। इस ओर से दिलीप चिल्लाया। प्रतिध्वनियाँ हुई।

किसी ने जवाब दिया ? वह कौन बोला ? ओह, यह तो उल्लू बोल रहा है!

दिलीप ने जरा सास लेकर फिर चिल्लाना शुरू किया। पर लता बोलती क्यो नही है? वह फिर चिल्लाया—"लता!"

जवाब मे उल्लू की कठोर आवाज आयी।

"लता! लता!"

कोई जवाब नही! अब दिलीप घबराया। लता को क्या हो गया है? अभी-अभी वह बोल रही थी। अचानक दिलीप को लगा कि दूर से किसी की घुटी हुई-सी आवाज आ रही है। क्या यह इतने प्रोफेसर बोल रहे है? दिलीप फिर चिल्लाया। जवाब नही मिला। दिलीप की आवाज जगल मे गूज उठी [illegible] न रहा हू [illegible] इस ओर"

जवाब मे ठडे पवन का एक सराटा गूजता करता

आया। दिलीप ने लता को पुकारा—"बहन, क्या तूने चाचा की आवाज सुनी ?"

जवाब मे सिर्फ कुछ झीगुर बोले।

दिलीप और घबराया। लता जिस झाडी मे गई थी, वहा वह दौडता हुआ गया और बहन को पुकारने लगा। कही से कोई उत्तर नही मिला। अब दिलीप के असमजस की कोई सीमा न रही। चाचा नही हैं, लता नही है, इस घोर वन मे मैं अकेला हू। ओह, क्या मेरी बहन को जगल का कोई भयानक प्राणी खा गया ?

"लता ! चाचा !" वह चीख उठा।

कोई गुबरैला कीडा उडा। जगल के वृक्ष और पत्ते खड-खडाए। ठण्डे आकाश मे धूल का बवण्डर बढने लगा। दु ख, चिन्ता और भय से दिलीप पागलो की तरह चीखता हुआ इधर-उधर दौडने लगा।

लता की खोज

घोघे के घर मे सोए प्रोफेसर को सारी रात ठण्ड लगती रही। उनका समूचा 'घर' ही ठण्डा पड गया था। सुबह जागने के साथ उन्हे विचार आया कि बेचारे बच्चे भी रात भर ठण्ड मे कापे होगे। उनकी खबर लेने वह तुरन्त बाहर निकले। जगत ठण्डे माहौल मे काप रहा था। हिम जैसे ठण्ड पवन मे प्रोफेसर भी काप उठे। आखे मलते हुए उन्होने देखा

कि जिस गोले मे बच्चे सोए थे वह नही है। वह चौक उठे। गोला कहा गया ? बच्चो का क्या हुआ ? पर प्रोफेसर ऐसे न थे कि घबराकर साहस खो देते। जहा पिछली रात गोला पडा था, वहा जाकर उन्होने धूल की बारीकी से जाच की। धूल मे गोले के पानी की ओर घसीटे जाने के चिह्न मौजूद थे। कगार तक आकर उन्हे यह निश्चय हो गया कि रात के तूफान मे गोला लुढककर नदी मे जा गिरा है और बच्चो सहित बह गया है। इसके बाद उन्होने देखा कि नदी का बहाव किस ओर है। एक सूखा डठल पानी मे डालते ही वह पूर्व की ओर बहने लगा।

प्रोफेसर ने सोचा—'जिस तरह बच्चे बह गए है, उसी तरह यदि मैं भी बह जाऊ तो मैं उनका पीछा कर सकूगा।'

कैसा साहस ! पानी मे लकडियाँ बहती आ रही थी। प्रोफेसर एक लकडी पर सवार हो गए और बहने लगे। कहा जाना है, कहा रुकना है, आगे क्या होगा—इसे कौन जान सकता था ? वह अपनी नौका मे बहते गए, किनारे और पानी की सतह पर नजर घुमाते गए और बच्चो को पुकारते गए।

सुबह की रोशनी अब फूटने लगी थी। उस धुधलके मे, किनारे के पास बचे हुए पानी मे उन्होने कुछ हलचल देखी। उनके मन मे चूकि बच्चे ही रम रहे थे, वह बोल उठे—'वे रहे ! [illegible] रहे है !'

प्रोफेसर लकडी पर से पानी मे कूद पडे और [illegible] किनारे की ओर तैरने लगे। उनके लिए हर क्षण [illegible] क्योकि जरा-सी देर से बच्चे सचमुच डूब सकते थे।

जब भ्रम टूटा तो उन्हें बडी निराशा हुई। वह तो कोश में से एक मच्छर के निकलने की हलचल थी। मच्छर बंधे हुए पानी मे अण्डे देते हैं। अण्डो से मच्छर की इल्ली निकलती है। इल्ली से शखी जैसा कोश बनता है। कोश मे से जब मच्छर निकलने वाला होता है, तो कोश पानी की सतह पर आ जाता है। थैली जैसे कोश की गर्दन फटती है और तडपकर भीतर का मच्छर बाहर उड जाता है। प्रोफेसर ने जो हलचल देखी थी, वह लता और दिलीप की नही, वरन् इसी मच्छर की थी। पवई सरोवर और आसपास के जगल मच्छरो के लिए प्रसिद्ध है।

निराश होकर प्रोफेसर वापस आए और एक लकडी पर चढ गए। ठण्डे पानी से भीगे शरीर पर ठण्डे झोके लगने से प्रोफेसर कबीर अकड-से गए। उनकी नौका आगे बहती जा रही थी। थोडी ही देर मे वह एक भवर मे फस गई। नौका के साथ-साथ प्रोफेसर भी गोल-गोल चक्कर काटने लगे।

प्रोफेसर ने चिन्ता के साथ सोचा—'यदि मै इस भवर मे फसा हू तो बच्चे भी जरूर यहा फसे होगे। यदि वे यहा डूब गए होगे तो मैं भी यही डूब जाऊगा।'

खुद डूब जाएगे, इस भय से नही, पर बच्चे डूब गए होगे, ऐसी आशका से वह कापने लगे। जोरो से घूमती नौका से वह चिपके रहे। कब तक घूमते रहे, इसका उन्हे पता नही लगा। अचानक एक झटके के साथ उनकी नौका भवर मे से छूटकर किनारे के साथ जा टकराई और प्रोफेसर उछलकर फिक गए। ठण्डे पानी मे से निकलकर वह झटपट किनारे की ओर जा ही रहे थे कि उन्होने दिलीप की

चीखे सुनी ।

"मैं यहा हू, यहा हू, दिलीप ! मैं यहा हू ।" प्रोफेसर चीखे ।

दिलीप दौडता हुआ आया । किनारा छोडकर वह पानी मे कूद पडा और कबीर चाचा से पानी मे ही लिपटकर फूट-फूटकर रोने लगा ।

प्रोफेसर को डर लगा कि शायद लता को कुछ हो गया है । उन्होने पूछा—"क्या बात है ? रोता क्यो है ?"

दिलीप ने कहा—"बहन खो गई ! किसी जानवर ने उसे खा लिया "

प्रोफेसर कबीर दिलीप को किनारे ले गए और बोले—"धीरज रख । हम उसे जरूर खोज निकालेंगे । ईश्वर ने मुझे तेरे पास पहुचा दिया है । वह हमे लता के पास भी पहुचा देगा । हिम्मत से काम ले । चल, बता ! लता कहा गायब हुई ?"

दिलीप ने सारी बात विस्तारपूर्वक बताई । फिर वे उस झाडी के पास गए, जहा से लता गायब हुई थी । वहा का चप्पा-चप्पा उन्होने छान डाला । कुछ भी पता नही चला । एक ओर प्रोफेसर खोज रहे थे, दूसरी ओर दिलीप ।

न जाने कितनी देर तक वे खोजते रहे । सब व्यर्थ । वे थक गए और आराम करने बैठे । प्रोफेसर के सामने एक झाड मे कुछ फूल थे । उनमे से कुछ बन्द थे और उनके भीतर कुछ हलचल हो रही थी, जैसे भीतर कोई कैद है और बन्द फूल को तोडकर बाहर निकलने की चेष्टा कर रहा है । यदि कोई और [illegible] होता तो वनस्पति व कीडो की दृष्टि के जानकार प्रोफेसर

इसका कारण जानने की कोशिश जरूर करते, पर अभी तो उनका चित्त ठिकाने नही था। उन्होने दिलीप से कहा—"चल, हम फिर से खोजें।"

थोडी देर बाद प्रोफेसर चिल्लाए—"दिलीप, यहा ! यहा आ !"

शायद लता मिल गई है, यह सोचकर दिलीप दौडता हुआ आया। देखा, तो प्रोफेसर धरती पर किसी निशान की जाच कर रहे हैं। प्रोफेसर कबीर ने कहा—"इन निशानो को देखकर मालूम होता है कि यहा लता पर किसी ने हमला किया था। लता ने उसका सामना भी किया, पर दुश्मन उसे घसीटकर ले गया है। वह दुश्मन कौन है, यह भी मैं जान गया हू। चल, निशान इस दिशा मे जा रहे है। दौड "

"लता को वह खा गया होगा " दिलीप रो पडा।

"यह रोने का समय नही है। दौड ! हिम्मत रख। हम उसे बचा लेंगे।"

वे दौडे, पर तभी हवा जोरो से वहने लगी। धूल मे बने निशान मिटने लगे।

धूल मे एक लम्बी रेखा दिखाई दे रही थी। लता को घसीटकर ले जाने वाले प्राणी का उस बहादुर बालिका ने कैसा सामना किया था, इसके निशान भी स्पष्ट थे। पवन सपाटे मारकर उन चिह्नो को मिटाता जा रहा था, अत वे पूरी ताकत के साथ दौडे।

"देख !" प्रोफेसर उत्तेजित होकर बोले—"लता ने इस घास को पकड रखा होगा, जिससे वह मुड गई है। दुश्मन ताकतवर था। उसके सामने लता का बल काम नही आया।

हमे शीघ्रता करनी चाहिए।"

प्रोफेसर कबीर दिलीप का हाथ पकडकर दौडने लगे। दूर कुछ हलचल थी। प्रोफेसर के मन मे लता ही थी, अत वह बोल उठे—"देख, सामने! वह लड रही है! दौड!"

प्रोफेसर और दिलीप लता को साहस देने के लिए चिल्लाए—"खबरदार! होशियार! लता, डरना नही! हम आ गए है।"

पर जहा हलचल दीखी थी, वहा पहुचने पर मालूम हुआ कि कुछ भी नही है। तो क्या यह सब केवल आँखो का धोखा था? दिलीप रोने लगा। तभी प्रोफेसर कबीर चिल्लाए—"इस घास को देख। लता अभी-अभी यहा से घसीटी गई है। उसने यह घास पकडी थी। दुश्मन उसे खीचकर ले गया। देख तो सही, मुडी हुई घास अभी ठीक से ऊची भी नही हुई है। दौड! दौड!"

दिलीप मे नई हिम्मत और आशा का सचार हो गया। वे दौडे।

कुछ दूर जाने के पश्चात् प्रोफेसर बोल उठे—"रुक जा!"

"क्या है?" दिलीप ने चौंककर पूछा।

"वह लता नही है। ये निशान भी लता और उसके दुश्मन के नही है। सामने देख।"

कोई शिकारी बर एक मोटी [illegible] को घसीटकर ले जा रही थी। [illegible] उसका जोरदार मुकाबला कर रही थी। [illegible] उछल-कूद रहे थे। [illegible] वे दोनो लता को [illegible] रास्ते पर जा रहे थे।

प्रोफेसर ने कहा—"शिकारी बर्रे इसी तरह कीडो का शिकार करती है।"

दिलीप सुबकते हुए बोला—"तब लता कहा होगी ?"

अब दिलीप को ध्यान आया कि वह कितना थक गया है। मारे प्यास के उसकी जीभ सूज गई थी और गला किसी मरुस्थल की तरह गर्म मालूम पड रहा था। वहा आसपास कही पानी नही था। उसने आखें घुमाई। अचानक उसकी नजर एक पौधे पर पडी। उसकी ऊची डडी हवा मे झूल रही थी, जिसके छोर पर छोटे-छोटे फूल लगे थे। मोटी पत्तिया भी थी, जिन पर रीछ जैसे बाल थे। उन बालो पर ओस के बिन्दु या वर्षा की बूंदो जैसी कोई चीज़ चमक रही थी। दिलीप उस 'पानी' को पीने के लिए दौडा।

प्रोफेसर चीख उठे—"खबरदार! उसे मत छूना!"

"लेकिन प्यास के मारे मेरी जान निकली जा रही है।"

"वापस आ। वह पानी नही है। पीने लायक रस भी नही है। वह पौधा मासाहारी है। शिकार को ललचाने के लिए उसने ये रस की बूदें पेश की हैं।"

दिलीप चकित हो गया। पौधा शिकार करता है? उसी समय एक मक्खी उस रस को पीने के लिए आ बैठी। तुरन्त ही बालो जैसे वे काटे इस तरह झुके कि मक्खी पत्तो के बीच दब गई। पत्तो ने एक ऐसा पाचक रस छोडा कि मक्खी देखते-देखते उसमे गल गई। मक्खी का रस पत्तो ने चूस लिया। फिर अस्थिपजर नीचे फेक दिया। उसके काटे जैसे बाल फिर खडे हो गए।

यह भयानक दृश्य देखकर दिलीप का दिल डूबने लगा।

यदि उस रस को पीने के लिए वह चला गया होता, तो उसकी भी यही हालत होती। वह आश्चर्य से बोला—"यह तो बडी विचित्र घटना है। वनस्पति मासाहार करती है, इसे यदि मैंने अपनी आखो से न देखा होता, तो कभी विश्वास न करता।"

प्रोफेसर ने कहा—"इससे भी अधिक आश्चर्यजनक पौधा तो 'घटपत्री' का है। अग्रेज़ उसे 'पिचर प्लाण्ट' कहते है। उसके पत्ते लोटे की तरह मुडे रहते हैं। कई 'लोटो' के ऊपर तो ढक्कन भी होता है। 'घटपत्री' के पौधे ७० प्रकार के होते हैं—कोई छोटे तो कोई बहुत बडे। किसी के पत्तो के लोटे इतने छोटे होते है कि तुम्हारी अगुली भी न घुसे। किसी के लोटे इतने बडे होते है कि पूरा एक किलो पानी समा जाए। लोटे के मुह के पास ललचाने वाला रस होता है। कीडा लोटे मे झाकता है तो भीतर ही लुढक जाता है।"

दिलीप बोला—"बडी विचित्र बात है।"

प्रोफेसर ने हँसकर कहा—"इससे भी विचित्र बात बताता हूं। कुछ कीडे ऐसे होते है, जिन पर 'घटपत्री' का रस कोई असर नही करता। वे कीडे तो बाकायदा 'घटपत्री' के लोटे मे रहने के लिए आते है। छोटे चूहे जितना बडा एक बन्दर होता है, जो रात को ही बाहर निकलता है और कीडे खाता है। वह 'घटपत्री' के लोटे मे हाथ डाल उन्ही कीडो का सफाया कर देता है। दूसरी ओर, बडी 'घटपत्री' का लोटा ऐसा होता है कि ज्यो ही बन्दर उसमे हाथ डालता है, हाथ उसी मे फँसा रह जाता है। वह लोटा स्वय बन्दर को हजम कर जाता है। कुछ पक्षी इन लोटो को फाडकर उनके कीडे खा जाते है।'

"आप ऐसी अजीव-अजीव बाते बता रहे हैं कि कोई भी मानने के लिए तैयार नही होगा।"

"मैं अजीब बाते नही बता रहा। मै तो विधाता ने जो अजीव सृष्टि बनाई है, उसकी दो-चार जानकारिया भर दे रहा हू। ये सब बाते सच है। हा, इतना बता दू कि 'घटपत्नी' के बडे लोटे वाले पौधे भारत मे नही होते।"

अचानक दिलीप दु ख से चीख उठा—"चाचा! लता को ऐसी ही कोई वनस्पति तो नही खा गई?"

प्रोफेसर ने चौककर पूछा, "तुझे ऐसा शक क्यो है?"

"लता एक झाड पर चढी थी। वही से आपको पुकार रही थी। अचानक उसकी आवाज बन्द हो गई।"

प्रोफेसर दिलीप का हाथ पकडकर दौडे—"चल, मुझे वह झाड बता।"

"क्या लता झाड के रस मे गल गई होगी?" दिलीप ने करुण आवाज मे पूछा।

"बातें मत कर। दौड जल्दी!"

जिस झाडी मे लता गुम हुई थी, वहा पहुचकर प्रोफेसर ने चप्पा-चप्पा छान डाला और कहा—"यहा तो एक भी झाड मासाहारी नही है। अच्छा, उसके गायब होने का समय क्या था?"

"सुबह थी, पर सूरज नही निकला था।"

"बस, बस! अब मेरी समझ मे सब कुछ आ गया। लता यही है और जीती-जागती बैठी है!"

"सचमुच, चाचा? वह जिन्दा है? यही है? बताइए, बताइए, मेरी बहन कहा है?" दिलीप अधैर्य से कापने लगा।

"वह फूल के पलग मे सोयी है। जब सूर्य डूबेगा तभी वह पलग से उतरेगी। वह किस फूल मे है, मैं अभी नही कह सकता, पर हमारे सामने जो पौधा है, उसके फूल रात को खिलते है और सुबह बन्द हो जाते है।"

"चलिए, लता को इसी वक्त खोज निकालें।"

प्रोफेसर ने हँसकर जवाब दिया—"यह असम्भव है। वह किस पौधे के किस फूल मे बन्द हो गई है, हमे नही मालूम। यदि वह फूल हम खोज निकाले, तो भी उस जेल को भेदने की ताकत हममे नही है।"

"उस फूल मे उसे कोई नुकसान तो नही पहुचेगा?"

"बिलकुल नही। केवल उसे सारा दिन उपवास करना पड़ेगा।"

अब दिलीप को याद आया कि उसे बहुत भूख लगी है। लता की चिन्ता दूर होने पर उसने कहा—"तब तो चाचा, हमे कुछ खा-पीकर एकाध नीद ले लेनी चाहिए।"

"तेरा कहना ठीक है। तू यही खड़ा रह। आज हम फलाहार करेगे।"

प्रोफेसर एक झाड पर चढे और उसके फूल के रस मे पराग मिला-मिलाकर, लड्डू बनाते हुए दिलीप की ओर फेंकने लगे।

दोनों भोजन करने बैठे। प्रोफेसर ने मुह मे लड्डू भरते हुए कहा—"हम मनुष्य से कीड़े हो गए है, पर यह जिन्दगी भी मजेदार है। ईश्वर यहा भी हमे लड्डू देता है।"

दिलीप ने खुश होते हुए कहा—'हम कुछ लड्डू घर ले [illegible]।'

"अच्छी बात है। और कुछ लड्डू हम अभी लता के लिए भी रख लेंगे।"

"पर भरेंगे किस मे ?"

"मैं तुझे उत्तम कारीगरी वाली थैलिया दूगा।"

खाने के बाद प्रोफेसर एक गीली जगह खोदने लगे। उन्होने ज़मीन मे से कुछ गोले बाहर निकाले जो उन्होने दिलीप को पानी से धोने के लिए दे दिए। जब दिलीप उन्हे धो चुका, तो गोलो मे से तरह-तरह की नक्काशी वाली टोक-रिया निकल पडी। दिलीप उनकी कारीगरी देखकर चकित हो गया। वे ऐसी लग रही थी, मानो हाथीदाँत मे खोदकर बनाई गई हो। दिलीप खुश होता हुआ बोला—"यह क्या है, चाचा ?"

प्रोफेसर ने हँसकर जवाब दिया—"यह कडरक वनस्पति (डायटम) का घर है।"

दिलीप यह बात न मान सका। ऐसी सूक्ष्म वनस्पति और उसका भी घर! उसने कहा—"आप मुझसे मजाक तो नही कर रहे ?"

"नही, दिलीप, यह बिलकुल सच्ची बात है। कडरक एक प्रकार की सूक्ष्म काई होती है। जिस प्रकार मोती का कीडा अपने शरीर मे से रस निकालकर सीप बनाता है, उसी प्रकार यह काई अपने रस से ऐसा घर बनाती है। सीप मे कैलशियम है। रेत और धूल मे भी है। कडरक काई का घर भी धूल के कैलशियम से ही बनता है। इस काई की एक इकाई मे महीने भर मे एक अरब इकाइया हो जाती हैं। जीने के लिए कडरक को केवल पानी और रोशनी चाहिए। उसकी जिन्दगी बहुत

छोटी होती है। वह पानी की सतह पर तैरती रहती है। जब मर जाती है तो तली मे बैठ जाती है। इस प्रकार तली मे काई की वारिश-सी होती रहती है।"

"फिर ये टोकरिया ज़मीन के अन्दर कैसे आ गई ?"

"यह भी बताता हू। युगो से ऐसा ही क्रम चला आ रहा है। वे पैदा होती है, मरती है और उनके घरो की वारिश पानी की तली पर होती रहती है। इन सूक्ष्म घरो की अगणित परतें जमती जाती हैं। अन्त मे सरोवर और समुद्र भी पट जाते है और पानी की जगह धरती बन जाती है।"

"यह तो बहुत विचित्र है! पर इससे मनुष्य को क्या लाभ ?"

"ये कडरक वनस्पति के 'घर' कई उद्योग-धन्धो मे काम आते है। द्रवो को छानने के लिए ये उपयोगी हैं। कारखाने मे जहा १,००० अश फैरनहीट गर्मी हो, वहा यदि चारो ओर इन घरो का आवरण चढाया जाए तो गर्मी बाहर नही आती। उतनी अधिक गर्मी मे भी इन 'घरो' को कोई नुकसान नही पहुचता। चल, अब जो टोकरी तुझे पसन्द हो, उसमे लड्डू भर ले।"

इसके बाद वे सो गए। झाड की छाया मे, शीतल पवन के झोके लेते हुए उन्हे मीठी नीद आ गई। दिलीप ने सपना देखा कि वे घर पहुच गए है। ललना मा को पुकार रही है। मा और पिताजी दौडकर आते है ..

अचानक दिलीप और प्रोफेसर एक परिचित आवाज से जाग उठे। उस समय सूरज डूब रहा था।

'बाबा! दिलीप भैया!'

"अच्छी बात है। और कुछ लड्डू हम अभी लता के लिए भी रख लेंगे।"

"पर भरेंगे किस मे ?"

"मैं तुझे उत्तम कारीगरी वाली थैलिया दूगा।"

खाने के बाद प्रोफेसर एक गीली जगह खोदने लगे। उन्होने ज़मीन मे से कुछ गोले बाहर निकाले जो उन्होने दिलीप को पानी से धोने के लिए दे दिए। जब दिलीप उन्हे धो चुका, तो गोलो मे से तरह-तरह की नक्काशी वाली टोकरिया निकल पडी। दिलीप उनकी कारीगरी देखकर चकित हो गया। वे ऐसी लग रही थी, मानो हाथीदाँत मे खोदकर बनाई गई हो। दिलीप खुश होता हुआ बोला—"यह क्या है, चाचा ?"

प्रोफेसर ने हँसकर जवाब दिया—"यह कडरक वनस्पति (डायटम) का घर है।"

दिलीप यह बात न मान सका। ऐसी सूक्ष्म वनस्पति और उसका भी घर! उसने कहा—"आप मुझसे मजाक तो नही कर रहे ?"

"नही, दिलीप, यह बिलकुल सच्ची बात है। कडरक एक प्रकार की सूक्ष्म काई होती है। जिस प्रकार मोती का कीडा अपने शरीर मे से रस निकालकर सीप बनाता है, उसी प्रकार यह काई अपने रस से ऐसा घर बनाती है। सीप मे कैलशियम है। रेत और धूल मे भी है। कडरक काई का घर भी धूल के कैलशियम से ही बनता है। इस काई की एक इकाई से महीने भर मे एक अरब इकाइया हो जाती हैं। जीने के लिए कडरक को केवल पानी और रोशनी चाहिए। उसकी जिन्दगी बहुत

छोटी होती है। वह पानी की सतह पर तैरती रहती है। जब मर जाती है तो तली मे बैठ जाती है। इस प्रकार तली मे काई की बारिश-सी होती रहती है।"

"फिर ये टोकरिया ज़मीन के अन्दर कैसे आ गई ?"

"यह भी बताता हू। युगो से ऐसा ही क्रम चला आ रहा है। वे पैदा होती हैं, मरती हैं और उनके घरो की बारिश पानी की तली पर होती रहती है। इन सूक्ष्म घरो की अगणित परतें जमती जाती हैं। अन्त मे सरोवर और समुद्र भी पट जाते है और पानी की जगह धरती बन जाती है।"

"यह तो बहुत विचित्र है! पर इससे मनुष्य को क्या लाभ ?"

"ये कडरक वनस्पति के 'घर' कई उद्योग-धन्धो मे काम आते है। द्रवो को छानने के लिए ये उपयोगी है। कारखाने मे जहा १,००० अश फैरनहीट गर्मी हो, वहा यदि चारो ओर इन घरो का आवरण चढाया जाए तो गर्मी बाहर नही आती। उतनी अधिक गर्मी मे भी इन 'घरो' को कोई नुकसान नही पहुँचता। चल, अब जो टोकरी तुझे पसन्द हो, उसमे लड्डू भर ले।"

इसके बाद वे सो गए। झाड की छाया मे, शीतल पवन के झोके लेते हुए उन्हे मीठी नीद आ गई। दिलीप ने सपना देखा कि वे घर पहुच गए है। लता मॉ को पुकार रही है। मा और पिताजी दौडकर आते है ..

अचानक दिलीप और प्रोफेसर एक परिचित आवाज से जाग उठे। उस समय सूरज डूब रहा था।

"चाचा! दिलीप भैया!"

दोनो चौंककर उठ बैठे। सचमुच वह लता थी। वह दौडती हुई आयी। वह चाचा और भाई से लिपट गई।

लता को जिन्दा देखकर प्रोफेसर कबीर और दिलीप हर्ष से उछलने लगे। सन्ध्या के उस सुनहरे प्रकाश मे लता सुनहरी परी-सी लग रही थी।

प्रोफेसर कबीर ने कहा—"अगर इस वक्त किसी अखबार का सवाददाता यहा होता तो अपने अखबार मे यही लिखता कि उसने आकाश से उतरी एक गन्धर्व-कन्या पवई के जगल मे देखी है।"

लता खिलखिलाकर हँस पडी। दिलीप के हाथो मे वही नक्काशीदार थैली थी। उसमे से शहद और पराग के लड्डुओ की सुगन्ध आ रही थी। लता बोली—"आप मेरी तारीफ ही करते रहेगे क्या ? उससे मेरा पेट थोडे ही भर जाएगा ! मैं भूख से मरी जा रही हू।"

दिलीप ने कहा—"बहन, आज तो तू जितने चाहेगी, उतने लड्डू खिलाऊगा। बोल, कितने खाएगी ?"

लता बोली—"मैं इतनी भूखी हूँ कि दस-बीस लड्डुओ का तो मेरे पेट मे पता भी नही चलेगा।"

वे भोजन करने बैठ गए। प्रोफेसर ने लता से पूछा—"बता तो सही, तू कहा पकड मे आ गई थी ?"

लता ने कहा—"मैं एक झाड पर चढी थी। वहा फूल खिल रहे थे। एक फूल मे खुशबू थी। उसमे मधुर रस भी था। मैं भूखी-प्यासी तो थी ही। फूल मे घुस गई। तभी फूल बन्द हो गया। चिल्ला-चिल्लाकर, बाहर निकलने के लिए जोर लगा-लगाकर मैं थक गई। फिर न जाने कब मुझे नीद



आ गई। जब मैं जागी, तो फूल खुल रहा था।"

दिलीप बोला—"अब वचन दे कि तू कभी हम से अकेली दूर नही जाएगी।"

चीटीमार सिंह

दूसरा दिन खुशनुमा था। ये साहसी वीर एक मैदान मे आगे बढ रहे थे। स्फूर्ति से भरे बच्चे उछलते हुए आगे-आगे दौड रहे थे। कबीर चाचा चिल्लाए कि आगे अकेले मत जाओ, पर सुनता कौन था ?

बच्चे एक छोटी टेकरी पर चढ गए। वे टेकरी के पीछे उतरकर अदृश्य हो गए। फिर किसी मुसीबत की आशका से प्रोफेसर उनके पीछे दौडे। तभी टेकरी के चढाव पर से लता चीखने लगी—"चाचा, दौडिए। बचाइये ! भैया पर राक्षस ने हमला कर दिया है। दौडिये !"

बेचारे प्रोफेसर अपनी पूरी ताकत लगाकर दौडे। उन्होने टेकरी पर चढकर देखा, तो एक गड्ढे की तली मे कोई भयकर राक्षस धूल मे आधा छिपा हुआ था। गड्ढे के कगार पर दिलीप गिरा पडा था और वह राक्षस उस पर पत्थर, ककड और रेत की भयकर बौछार कर रहा था। वह चाहता था कि दिलीप नीचे गड्ढे मे गिर जाए, ताकि वह उसका शिकार कर सके।

प्रोफेसर चौक उठे। दिलीप गड्ढे की तली मे लुढकने से

बचने के लिए जी-जान से कोशिश कर रहा था। उस पर जो बौछार हो रही थी, उस से वह बहुत घायल हो चुका था। राक्षस के मुह पर चिमटे-जैसी दो धारियाँ थी। वह अधिक-से-अधिक जोर से दिलीप पर ककड-पत्थर की बौछार करता जा रहा था। दिलीप अब किसी भी क्षण गड्ढे मे गिर जाएगा। वह राक्षस उसे पकड लेगा।

प्रोफेसर ने तेजी से दौडकर दिलीप के हाथ पकड लिए और ऊपर खीचने लगे। उन्होने देखा कि दिलीप बेहोश हो गया है। उस राक्षस ने प्रोफेसर पर भी बौछार शुरू कर दी—इस आशा मे कि अब एक की जगह दो शिकार मिलेंगे। परन्तु उसकी गोलन्दाजी की परवाह किए बिना प्रोफेसर कबीर दिलीप को ऊपर घसीट लाने मे सफल हो गए। दिलीप के शरीर से जगह-जगह खून निकल रहा था। लता रोने लगी। प्रोफेसर ने सान्त्वना देते हुए कहा—"घबरा मत, अभी वह होश मे आ जायेगा।"

कबीर चाचा की चिकित्सा से कुछ ही देर मे दिलीप होश मे आ गया। उसने आसपास देखकर कहा—"वह राक्षस कहाँ है ?"

मुकाबला हुआ, वह तो चीटीमार सिंह का बच्चा है, जो अपने मा-बाप से बिलकुल दूसरे स्वरूप का और उनसे भी भयकर होता है।"

लता को यह सुनकर बडा आश्चर्य हुआ । वह बोली—"उसके माँ-बाप कैसे होते है ?"

"माँ-बाप फुफुंदी (ड्रेगन फ्लाई) की तरह पख वाले कीडे होते है, जबकि बच्चा, कीटक रूप मे, बिना पख का होता है। वह रेत या धूल मे अपने सिर की उल्टी दिशा मे गोल-गोल घूमकर गड्ढा बनाता है और उसकी तली मे बैठा रहता है। जो भी चीटी, मकोडे या दूसरे कीडे वहाँ से निकलते है, वे गड्ढे के कगार पर से लुढककर तली मे गिर पडते हैं। यदि वे न गिर रहे हों, तो यह कीडा उन पर रेत-ककड उछाल-कर गोलन्दाजी करता है। उन्हे नीचे गिरा देने के बाद "

"वह उन्हे खा जाता है ?" लता ने पूछा।

"नही, खाने के लिए उसके मुँह नही है।" प्रोफेसर हँस-कर बोले ।

"क्या कहा ?" दिलीप यह सुनकर अपना दर्द भी भूल गया।

"हाँ, उसके मुँह नही होता। उसके माथे मे से सडसी की तरह दो नोकें निकली होती है। उन नोको से पकडकर वह शिकार को छेद देता है। उन नोको के ही जरिए वह उसका खून चूस लेता है। जो अस्थिपजर बचता है, उसे अपने माथे पर रखकर वह ऐसा उछालता है कि अस्थिपजर गड्ढे के बाहर जा गिरता है।"

"यह चीटीमार सिंह तो गजब है। वह कितनो दिनो तक

अपने गड्ढे मे रहता है ?"

प्रोफेसर ने कहा—"उसे रोज़ शिकार थोडे ही मिलता है। ऐसा भी हो सकता है कि उसे महीनो तक उपवास करना पडे। फिर भी उसका धैर्य समाप्त नही होता। उसके छ और आठ महीनो तक उपवास करने के उदाहरण नोट किये गए है। लगातार पोषण न मिलने पर, कीटक मे से परिपक्व अवस्था मे पहुचने के लिये उसे दो वर्ष भी लग जाते है। उसके माँ-बाप उडने मे फुर्फुदी जितने समर्थ नही होते। मादा अपने अण्डे रेत या धूल मे देती है और कुदरत उन अण्डो को सेती है। बच्चा अण्डे से निकलते ही तुरन्त गड्ढा बनाकर तली मे बैठ जाता है और शिकार की राह देखने लगता है। ज्यो-ज्यो उसका कद बढता जाता है, त्यो-त्यो वह और बडा गड्ढा बनाता जाता है। दिलीप की तकदीर तेज थी कि वह उस गड्ढे के भीतर नही लुढक गया, वरना "

'वरना ?"

'मै भी उसे न बचा सकता। जहरीले साप की तरह चीटीमार सिह के भी दात (सुइनुमा नोके) पोले होते है। वह उन्ही के जरिए जहर दाखिल करके शिकार को शिथिल बना देता है।' और चाचा ने कहा—'हम अपने घर मे इस चीटीमार सिह को पाल सकते है।"

"सचमुच ?"

"हा, मैने डिबिया मे रेत भरकर कई बार उन्हे पाला है। इनकी रोज देख-भाल करने की भी जरूरत नही होती। महीने मे एक-दो चीटी दे दो, तो भी काफी है। इसके बदले मे तुम्हे अच्छा तमाशा देखने को मिलता है। यदि तुम चीटी के बदले

उसके गड्ढे मे एकाध ककड डाल दो, तो वह अपने वजन से दुगुने भारी ककड को भी सिर पर चढाकर, गड्ढे से बाहर फेक देता है। उसके सिर के हर ओर सात-सात आखे होती हैं।"

"चाचा! आप तो हमेशा अजीब-अजीब बातें बताते हैं," लता ने हुलसकर कहा।

"लेकिन उन्हे तुम सच मानते हो या नही ?"

"बिलकुल सच मानते हैं। 'चीटीमार सिह' के खतरे का मुकाबला खुद मैंने करके देखा है।" दिलीप ने कहा।

"बातो को सच मानना ही काफी नही। बातो को गुनना भी आना चाहिए।" कबीर चाचा ने कहा—"अगर मेरे आदेशो का पालन न करोगे तो मैं तुम्हे गुनी बच्चे नही कहूँगा।"

"हम आपके सभी आदेश मानेंगे, चाचा!" दोनो बच्चो ने कहा।

अँधेरी गुफा में

उस दिन घायल तन, भयभीत मन और थकावट से दिलीप को बुखार आ गया। प्रोफेसर ने उसे कन्धो पर उठा लिया। दूसरे दिन वे तीनो सरोवर के किनारे आ पहुँचे। छोटे से बडे होने के रसायन की पेटी जहाँ रखी गई थी, वह स्थान सरोवर के दूसरे किनारे पर था।

लता हर्ष से बोल उठी—"वह लाल झण्डी तो अब सामने

ही है।"

प्रोफेसर ने कहा—"हाँ, पर हमे यहाँ एक सप्ताह और रुकना होगा। दिलीप को चगा होने मे उतना समय लग ही जाएगा।"

लता का उत्साह ठण्डा पड गया। उसने कहा—"भैया को दवा की जरूरत है। यहाँ दवा हम कहाँ से लायेगे ?"

प्रोफेसर ने कहा—"डाक्टरो के पास भी जो दवा होती है, वह कुदरत ही देती है। हम दिलीप के लिए दवा की खोज इसी कुदरत मे करेगे। देख, यह 'वसाका' पौधा है। उसमे सफेद फूल आए है। फूल की डडी मे मीठा रस होता है। वह रस दिलीप का वुखार उतार देगा, खासी मिटा देगा। दिलीप सप्ताह भर आराम करेगा तो उसकी स्फूर्ति और तन्दुरुस्ती दोनो वापस आ जाएगी। इस बीच हम इस पेड की जड की पोल मे आराम से रह सकें, इसका प्रवन्ध करना होगा। साथ ही सरोवर के उस पार पहुँचने के लिए हम एक युद्ध-नौका भी बनाएगे।"

'युद्ध-नौका ?"

हा। सरोवर मे कितने दुश्मन रहते हैं, यह तो तू जानती ही है। सरोवर हम तैरकर कैसे पार करेंगे ? नौका चाहिए ही।"

उस दिन उन्होंने जड की पोल मे सफाई की और उसे रहने लायक बना लिया। उनके लिए पोल गुफा जैसी ही थी। सेमल का रेशमी कपास उड रहा था। उसे इकट्ठा करके, उसके ऊपर फूल की पखुडिया बिछाकर सुन्दर बिछौना तैयार किया गया। पत्तो से लता ने मेज और कुर्सिया भी बनाई।

रात होने से पहले ही गुफा के भीतर ऐसी सजावट हो गई कि प्रोफेसर कबीर लता की चतुराई और गृहकला की तारीफ किए बिना न रह सके। दिलीप सारा दिन इस तरह सोता रहा, मानो बेहोश हो।

उस दिन प्रोफेसर ने एक जगली मधुमक्खी के भण्डार की खोज की। जगली मधुमक्खी हमारी मधुमक्खी की तरह शहद नही बनाती। वह मोम के 'डिब्बे'-से बनाकर, उन्हे शहद से भर देती है। जब खुराक की कमी होती है, तब इन्ही डिब्बो को तोडकर वह शहद खाती है। प्रोफेसर ऐसे कई डिब्बो को एक के बाद एक लुढकाकर गुफा मे ले आए और लम्बी अवधि के लिए खुराक गोदाम मे इकट्ठी कर ली। लता ने इस कार्य मे प्रोफेसर की बहुत मदद की। एक डिब्बा फूट जाने से लता शहद मे सन गई। वह सरोवर के पानी मे नहाने चली गई। प्रोफेसर को जब इसकी खबर मिली, तो वह उसकी सुरक्षा के लिए फौरन दौडते हुए गए। उन्होने उसे मीठी डाट लगाई। लता ने कहा—"पर चाचा, मैं शहद से सन गई थी।"

"इससे तो तेरे लिए और अधिक खतरा पैदा हो गया था। तेरे जैसी मीठी लडकी और वह भी शहद से सनी! फिर कोई राक्षस तुझे खा जाने का लालच कैसे रोकता? यह तो जगल है। यहा हर कदम पर दुश्मन है। तुम दोनो सावधान न रहोगे तो हम जिन्दा घर नही पहुचेंगे।"

उस शाम को चाचा-भतीजी नौका के लिए सामान खोजने बाहर गए। गुफा मे कोई दुश्मन न चला आए, इसके लिए उन्होने गुफा का मुंह बन्द कर दिया, क्योकि दिलीप गाढी नीद

मे था।

लता ने एक मजवूत पत्ता खोज निकाला। वह इतना भारी था कि प्रोफेसर कवीर और लता मिलकर भी उसे नही खिसका सके। प्रोफेसर ने कहा—"निश्चय ही पत्ते के नीचे किसी के अण्डे चिपके हुए है।"

उन्होने झुककर नीचे देखा। उनकी वात विलकुल सच निकली।

प्रोफेनर ने कहा—"सैकडो तरह के पतगे, सैकडो तितलिया, सैकडो गुवरैले कीडे और सैकडो तरह के अन्य दूसरे कीडे



पत्तो पर अण्डे देते है। यह पत्ता हमारे काम न आ सकेगा।'

अंधेरा हो जाने के कारण वे वापस गुफा की ओर आए।

जब दूर से गुफा दीखी, तो उसमे आग की लपटें उठ रही थी। लता घबरा गई और चीखती हुई दौडी—"आग! आग! चाचा, दौडिए! दिलीप भैया आग मे फंस गए है।"

प्रोफेसर ने चिल्लाकर कहा—"डरने की कोई बात नही है।" पर लता गुफा के मुंह के पास पहुंच चुकी थी। वह चीखी—"भैया! आप झुलस तो नही गए?"

अन्दर से दिलीप की आवाज़ आयी—"मुझे कुछ भी नही हुआ है, बहन! और यहा आग भी नही लगी।"

तब तक कबीर चाचा भी आ पहुंचे और खूब हंसे। उन्होने कहा—"लता इतनी भोली है कि छोटे कीडे तो क्या, उनके बच्चो से भी बुद्धू बन जाती है।"

"मुझे किसने बुद्धू बनाया?"

"उस कोने से आग की जो लपटें निकल रही हैं, वे लपटे नही, जुगनू के बच्चो की रोशनी है। ये बच्चे वहा कीटक रूप मे पडे है।"

"प्रकृति ने जुगनू को रोशनी दी है, परन्तु क्या उसके [illegible]को को भी दी है?"

"हाँ, यही उनकी रक्षा का साधन है। उनकी चमक से [illegible] दुश्मन भाग जाते है। जुगनू हवा मे उडते समय [illegible]-रहकर चमक उठते है। अत वे किस समय कहा है, यह उनके शत्रु समझ नही पाते।"

"वाह! भगवान ने इनकी रक्षा के लिए कैसी सूझ-बूझ दिखाई है!"

प्रोफेसर ने कहा—"जुगनू की चमक तो धूप और बिजली से भी बेहतर है, क्योकि बिजली उत्पन्न करने के लिए जितनी शक्ति खर्च की जाती है, उसकी मात्र दस प्रतिशत रोशनी निकलती है। सूर्य मे खर्च की गई शक्ति की केवल पचास प्रतिशत रोशनी निकलती है, जबकि जुगनू जितनी शक्ति खर्च करता है, उसकी लगभग सौ प्रतिशत ही रोशनी पैदा कर लेता है।"

लता बोल उठी—"ओहो ! जुगनू जैसा छोटा-सा जीव भी सूर्य और बिजली से बढकर है। जुगनू की रोशनी मे गर्मी भी है क्या ?"

"नही, गर्मी लगभग नही है। दक्षिण अमेरिका के घने जगलो मे इतने बडे जुगनू होते है कि ब्राजील के आदिवासी उन्हे पकडकर दीपक की तरह इस्तेमाल करते है।"

दिलीप बोल उठा—"ऐसे अच्छे दीपक किसे पसन्द न आएगे। क्या दूसरे कीडो मे भी ऐसी रोशनी होती है ?"

प्रोफेसर ने कहा—"गहरे समुद्र मे जहा सूर्य की किरणे नही पहुच पाती और जहा सदा अन्धकार ही रहता है, वहा स्वय-प्रकाशित मछलिया, कीडे आदि जीव होते है। लेकिन यदि इस जमीन की ही बात करें, तो जुगनू के अलावा रोशनी देनेवाले कीडे दूसरे नही है। हा, स्वय-प्रकाशित सूक्ष्म कीटाणु जरूर है।"

"सूक्ष्म कीटाणु ! वे तो नगी आंखो से देखे भी नही जा सकते !"

"होते है। परन्तु जब अनगिनत कीटाणु एक साथ हो और एक जगह रहे हो, तब कीटाणु भले ही न दीखें, उनकी

चमक तो दीखेगी ही। वर्षा ऋतु मे जब लकडी सडती है, तब तुमने उसके ऊपर प्रकाशित लपट-सी देखी है ?"

दिलीप बोल उठा—"हा, हा! पिछली बारिशो मे मैंने वैसा दृश्य अपने बगीचे मे देखा था। हरी या जामुनी रग की लपट थी वह!"

"बिलकुल ठीक! वे ही स्वय-प्रकाशित कीटाणु हैं। मरी हुई मछली या किसी अन्य प्राणी के सडते शरीर पर भी, रात के अन्धकार मे कभी-कभी ऐसे कीटाणु नज़र आते हैं।"

लता बोली—"ईश्वर ने कैसी गलती की है! ऐसा मनोहर प्रकाश मनुष्य को देने के बदले क्षुद्र कीटाणुओ को दे दिया!"

प्रोफेसर ने तुरन्त जवाब दिया—"नही, नही, ईश्वर ने कोई गलती नही की है। मनुष्य अपने ज्ञान और अच्छे कार्यों से प्रकाशित हो सकता है।"

दिलीप ने मजाक किया—"मुझे अभी ऐसा ज्ञान मिला है कि हमे एक सत्कर्म करना चाहिए और वह यह कि पेट मे जो भूख जल रही है, उसे बुझा दिया जाए!"

सब हँस पडे और भोजन करने बैठ गए।

उठ गया पाल, होशियार !

दिलीप को चगा होने और शक्ति प्राप्त करने मे तीन-चार दिन लगने की उम्मीद थी। प्रोफेसर ने सोचा कि इस समय

का कुछ सदुपयोग कर लेना चाहिए। योजना पहले से ही तैयार थी—नाव बनाई जाए, उस पर पाल चढ़ाया जाए, फिर उसे पनई सरोवर में उतार दिया जाए।

प्रोफेसर ने पहले वायु की दिशा का निरीक्षण किया। हिसाब लगाया तो पता चला कि इस सप्ताह वायु की दिशा बदलने की जरा भी आशंका नहीं है। यदि दिशा यही रही, तो उसकी मदद से पाल वाली नाव सीधी उस पार पहुँच जाएगी। जिस सफर को पैदल तय करने में उन्हें एक सप्ताह लगेगा, उसे वे इस उपाय से एक दिन में तय कर सकते हैं।

दूसरे दिन लता और प्रोफेसर घूमने निकले। एक जगह उन्होंने कुछ लकड़ियां देखीं और सोचा कि यदि इनको एक नाव बनाने की तरह बांधकर नाव बनाई जाए, तो वह अच्छा काम देगी। पर लकड़ियों को सरोवर तक ले कैसे जाया जाए? यदि एक बार लकड़ियां सरोवर के किनारे पहुँच जाएं, तो कुछ परिश्रम करके उन्हें तैराया जा सकता है।

प्रोफेसर इस समस्या पर विचार करते हुए आसपास देख ही रहे थे कि सहसा सामने का एक टीला हिलने लगा। क्या है टीले के नीचे? अनुभवी प्रोफेसर एक क्षण में समझ गए कि माजरा क्या है। दूसरे ही क्षण बिजली की कौंध की तरह एक विचार उनके मस्तिष्क में आया। वह बोले—"लता, बड़े-बड़े लक्कड़ खींच लाने के लिए जंगल में हाथी का उपयोग होता है, यह तू जानती है न?"

हाथी की बात लता को अच्छी लगी। वह बोली—"हां। क्यों?"

"हम भी लकड़ियों को सरोवर तक घसीट ले जाने के

लिए हाथी का उपयोग करेंगे ।"

लता बोली—"हाथी ? यहाँ कहाँ हाथी है ?"

प्रोफेसर ने हँसकर कहा—"यही है। फर्क सिर्फ इतना है कि वह कीडो की सृष्टि का हाथी है ।"

लता अधीर होकर बोली—"कहाँ है ? दिखाइए !"

"ऊहू ! अभी नही ! तू यहाँ बैठी रह, मैं अभी आया।"

थोडी ही देर मे प्रोफेसर कबीर किसी मकडी के जाले मे से कुछ तार ले आए। उन्हे मिलाकर उन्होने एक रस्सी बनाई। रस्सी का छोर उन्होने एक लकडी के सिरे से बाँध दिया। फिर, दूसरा छोर फासी के फन्दे की तरह बना दिया। एक लाठी उन्होने खुद ली और दूसरी लता को देकर कहा—"देख लता, उस टीले के नीचे काला गुबरैला है "

लता आश्चर्य से बोली—"काला गुबरैला ? यह कैसा होता है ?"

गुबरैले कीडे तू कई प्रकार के देख चुकी। काला गुबरैला भी एक प्रकार का कीडा ही है। उसे अपनी रक्षा के लिए कुदरत ने एक घिनौनी, तीव्र गन्ध दी है। जब दुश्मन उसे मारने आता है, तो वह गन्ध छोडने लगता है। घबराकर दुश्मन भाग जाता है। वह कीडा हाथी को तरह झूमता हुआ धीरे-धीरे चलता है। हाथी की ही तरह वह भारी वजन भी खीच सकता है। अब मैं उसे मिट्टी से बाहर निकालता हूँ। उसे मे रस्सी के उस फन्दे की ओर हाकूगा। दोनो ओर हम लाठी लेकर खडे हो जाएगे और उसे इधर-उधर न जाने देकर ठीक फन्दे के बीच से निकालेंगे। फन्दे मे जाते ही वह फँस जाएगा। फिर हम उसे सरोवर की ओर हाकेंगे। पीछे-पीछे यह लकडी

भी घिसटती हुई आएगी। ऐसी चार लकड़ियों से हम नाव बनाएगे और उसमे सरोवर पार कर लेगे।"

लता उत्साह से बोल उठी—"वाह, वाह ! चाचा, आपकी योजना तो कमाल की है। इस जगल मे हम जगली हाथी को हाकेगे और उससे बाक़ायदा काम लेगे, यह विचार ही कितना रोमाचक है!"

प्रोफेसर ने हँसकर कहा—"हाँ, लेकिन जब 'हाथी' गन्ध छोडेगा, तो तेरा सारा आनन्द उड जाएगा।"

"कोई हर्ज नही। गन्ध का सामना करने के लिए भी तैयार हूँ।"

प्रोफेसर ने लाठी मिट्टी मे डाली। मिट्टी का ढेला उलटने पर एक बडा-सा काला गुबरैला निकल आया। वह भागकर छिपने ही वाला था कि एक ओर से लता ने और दूसरी ओर से प्रोफेसर ने हाथ उछालते और चिल्लाते हुए उसे फन्दे की ओर चलने को विवश कर दिया। उसने कभी एक ओर से और कभी दूसरी ओर से भागने की बहुत कोशिश की, पर लता और प्रोफेसर लकडी से धकेल-धकेलकर उसे सही मार्ग पर ले आए। अन्त मे ज्यो ही वह उस फन्दे मे से निकला, प्रोफेसर ने रस्सी खीच दी। फन्दा उसके शरीर पर फासी की तरह फँस गया। इससे वह 'हाथी' भडककर भागने लगा। उसके पीछे-पीछे लकडी भी घिसटती हुई जाने लगी। लता को यह दृश्य देखकर बहुत मजा आया। मारे खुशी के वह [illegible] लगी।

फिर तो सरकस के जुलूस की तरह वे [illegible]

[illegible] दिए। 'हाथी' जरा भी [illegible]

और प्रोफेसर खखारकर और लाठी से धक्के मारकर उसे सरोवर की तरफ मोड देते। लता को खूब मजा आया। वह हाफ रही थी। 'हाथी' हाकने की खुशी मे वह पागल-सी हो गई थी।

अन्त मे जब यह जुलूस पानी तक पहुँचा तो प्रोफेसर ने 'हाथी' की मदद से लकडी को बिलकुल किनारे लगाया। फिर उन्होने रस्सी खोल दी। गुबरैला भाग गया। प्रोफेसर कबीर हँसकर लता से बोले—"जगल मे पालतू हाथी को समय-समय पर चारा चरने के लिए छोड दिया जाता है। हमे भी अब इस 'हाथी' को छोड देना चाहिए। दूसरी लकडी लाने के लिए हम दूसरा हाथी पकड लेंगे।"

लता हर्ष से नाच उठी—"वाह, वाह! वाह, वाह!"

उस दिन वे इस उपाय से दो लकडियाँ सरोवर के किनारे ले आए। जब दिलीप से लता ने आज के पराक्रम की बात कही तो बेचारे को इसका सख्त अफसोस हुआ कि चगा न होने के कारण उसे दिन भर गुफा मे रहना पडा। दिलीप ने कहा—"कल मैं भी चलूगा।"

मगर प्रोफेसर ने उसकी बात मजूर नही की। दिलासा देने के लिए उन्होने कहा—"मैंने सुना है कि तू एक अच्छा खलासी है। नाव चलाने मे हम तेरे ज्ञान का उपयोग करेंगे।"

दूसरे दिन बची हुई दो लकडिया भी वे इसी तरह किनारे ले आए। इसके बाद लता और प्रोफेसर ने एक-एक कर उन लकडियो को पानी मे लुढका दिया। यह काम बहुत मुश्किल था। कडी मेहनत करने से वे थक गए थे, पर आज तो उनके लिए आराम हराम था। यदि लकडियो को रस्सी से न बाध

दिया जाता, तो वे पानी में बह जाती। बहुत परिश्रम करके उन्होंने चारों लकड़ियों को रस्सी से बांध दिया।

लता थक गई थी तो भी वह आनन्द से नाच उठी—"वाह, वाह! नाव चलने के लिए तैयार है!"

प्रोफेसर ने सांस लेते हुए कहा—"अभी देर है। अभी तो बहुत-सा काम बाकी है। इन लकड़ियों के ऊपर अभी हमें नाव के आकार का पत्ता जमाना है, जिससे पानी भीतर न आए। फिर उसके ऊपर पाल चढ़ाना है।"

लता खुश होकर बोली—"तब तो हमारी नाव बिना मेहनत के चलेगी। हमें पतवार भी नहीं चलानी पड़ेगी।"

"हां, यह ठीक है, परन्तु पतवार की हमें जरूरत तो रहेगी ही। जिस प्रकार मोटर चलाते समय हैंडिल से उसकी दिशा बदली जाती है, उसी प्रकार पतवार से हम नाव की दिशा पर काबू रखेंगे। हमारे पास तोपें नहीं हैं। यदि दुश्मन ने हमला किया तो पतवारों से ही उसका सामना करना पड़ेगा।"

दूसरे दिन वे नाव के आकार का एक मजबूत पत्ता हाथी की मदद से खींचकर ले आए और उसे लकड़ियों के बेड़े पर जमा दिया। तख्ते के साथ पत्ते को अच्छी तरह बांध भी दिया गया। फिर बीच में कीचड़ का एक ढेर रख कर उसमें एक लकड़ी खड़ी कर दी गई। अब यह नाव बिल-[illegible] नाव जैसी लग रही थी। लता उत्साह [illegible] उठी—"अब पाल लगाना चाहिए। पाल कहां है [illegible]"

[illegible] भी आ जाएगा। कहां से [illegible] [illegible]। तू अन्दाज़ा लगाती रह।"

दूसरे दिन जब सफेद दूध जैसे रेशमी पाल को एक 'हाथी' खीचकर लाया, तब वहा दिलीप भी मौजूद था। नाव और पाल को देखकर वह आश्चर्य मे भर उठा। वह बोला—"चाचा, ऐसा सुन्दर कपडा आप कहा से ले आए ?"

प्रोफेसर ने हँसकर कहा—"बम्बई के बन्दरगाह पर ठहरने वाले किसी भी जहाज़ का पाल ऐसा न होगा। तुम लोगो ने देखा होगा कि घर और खण्डहरो की दीवारो पर मकडे एक सफेद परदे से 'घोसला' बनाते हैं। उस सफेद रेशमी परदे और दीवार के बीच मे मकडे की मादा अण्डे देती है, बच्चो का पालन-पोषण भी करती है। मैं उसी रेशमी परदे को उठा लाया हू। चाहे कैसा भी तूफान हो, इसका पाल नही फटेगा।"

वह दिन तरह-तरह के पाल तैयार करने मे बीता। दिलीप ने इस काम मे खूब हाथ बँटाया। अनुभवी खलासी की अदा से वह सलाह देता जाता था। उन पालो मे मुख्य पाल के अलावा कलमी, गोसी और कातरा उप-पालो को भी शामिल किया गया, ताकि हवा की दिशा के अनुसार पाल चढाए जा सके। पालो के लिए उन रस्सियो और लडकियो को भी तैयार किया गया, जिन पर पाल बाधे और उठाए जाते है। नाव मे खूराक तथा अन्य सामान जमा करने मे एक दिन और लग गया। उसी दिन उन्होने कुछ आरम्भ भी किया। पूरा खतरा था कि नाव तूफान मे फस जाए या किसी अन्य दिशा मे ही बह जाए। इसीलिए ख़ुराक व अन्य सामग्री का पूरा इन्तजाम कर लेना जरूरी था। अधिक तेजी मे नाव उलट न जाए, इस मकसद से, वजन के



लिए उसमे कीचड भी भरी गई ।

दिलीप इन सब तैयारियो से बहुत प्रसन्न हुआ । उसने प्रोफेसर के सामने एक दरख्वास्त पेश की—"प्राचीन आविष्कारको की श्रद्धा मे जब हम इस सरोवर-रूपी महासागर मे कूच करने वाले हैं, हमें अपने जहाज का कुछ नाम भी रखना चाहिए ।"

लता उत्साह से बोल उठी—'हा, हा, चाचा ! हमे अपने जहाज का नाम अवश्य रखना चाहिए ।"

दिलीप ने कहा—"महागुजरात के खलासी अपने जहाजो के नाम रामप्रसाद, लक्ष्मीप्रसाद आदि रखते थे ।"

प्रोफेसर ने कहा—"तुम्हारी दरख्वास्त मजूर की जाती है । अब तक हम ईश्वर की कृपा से ही सुरक्षित बच सके हैं । उसी की कृपा से अब हमारी मुक्ति निकट है । हम अपने जहाज का नाम रखेंगे—ईश्वरप्रसाद !"

बच्चो ने बडे हर्ष से इस नाम का स्वागत किया ।

प्रोफेसर ने कहा—"नामकरण-सस्कार करते समय जहाज पर श्रीफल फोडा जाता है । गुड-धनिया भी बाटा जाता है । हमारे पास इनमे से कुछ भी नही है, लेकिन पचामृत मे से एक अमृत शहद है । शहद खाकर हम नामकरण-उत्सव मनाएगे ।"

वह दिन आनन्द मे बीत गया । दूसरे दिन मगलवार था । सुबह तडके ही नित्य कर्मों से निपटकर इन साहसी वीरो ने मगल-प्रयाण किया । जिस गुफा ने एक सप्ताह तक उन्हे मा की तरह आश्रय दिया था, उसे आर्य रीति के अनुसार नमस्कार करके वे नाव पर चढ गए । पाल उठा दिया गया ।

दिलीप को बड़प्पन देने के लिए प्रोफेसर ने उसे उस नाव का कप्तान बना दिया और स्वयं खलासी बन गए। बेचारी लता के लिए कोई ओहदा न बचा।

लंगर उठा। पाल में हवा भरी। नाव चलने लगी। अचानक इतने जोर से हवा आयी कि नाव एक ओर झुकने लगी।

"दामण आरिया!" कप्तान ने हुक्म दिया।

पाल के किनारे बांधी गई एक रस्सी तुरन्त ढीली कर दी गई, ताकि फूला हुआ पाल नाव को झुका न दे। जब नाव ने वेग पकड़ लिया तब उसकी गति बढ़ाने के लिए पाल को पूरा उठाने में कोई खतरा नहीं था।

"होव्वेश!"

रस्सी खींच दी गई। पाल तन गया। नाव की गति बहुत बढ़ गई। पानी काटती हुई, लहरें उछालती हुई, पानी में अपने पीछे फेनिल रेखा छोड़ती हुई नाव झपटने लगी। यदि गति ऐसी ही बनी रही, तो शाम होते-होते जरूर उस किनारे पहुंच जाएंगे

स्फूर्तिदायक शीतल पवन सपाटे मार रहा था। उसने प्रोफेसर की दाढ़ी तथा लता और दिलीप के बाल फरफरा रहे थे। इन बहादुर खलासियों के दिल उत्साह, आनन्द और आशा से धड़क उठे थे।

हवाई जहाज की सवारी

दो दिन शाम को इन साहसी वीरों का ...

प्रसाद' सरोवर के उस पार पहुच गया। सौभाग्यवश रास्ते मे किसी भी खतरे का सामना नही करना पडा। इन खलासियो ने धरती पर ऐसी अदा से पैर रखा, मानो उन्होने किसी नए टापू की खोज की हो। बच्चो को अपना जहाज और उसमे जमा की हुई सामग्री को लावारिस छोडते बडा दुख हुआ, लेकिन जब उन्होने सोचा कि अब वे अपने घर जा रहे हैं, तो दुख को भूलते भी उन्हे देर न लगी।

किनारे के पास एक टेकरी थी। प्रोफेसर बच्चे की-सी स्फूर्ति से उस पर चढ गए। उनके साथ लता और दिलीप भी चढ गए। चोटी पर जाकर उन्होने देखा तो दूर एक टीले पर वह लाल झण्डी फहरा रही थी। वह वही स्थान था, जहा उस जादुई रसायन को छिपाकर रखा गया था। उसको खाते ही ये साहसी वीर पहले जितने बडे हो जाएँगे। जिस टेकरी पर ये साहसी वीर खडे थे, उससे वह झण्डी काफी दूर थी। बीच मे एक जगल पडता था। उस जगल को पैदल पार करने मे एक सप्ताह लग जाता। इस बीच न जाने कितनी मुसीबतो का सामना करना पडता।

प्रोफेसर कबीर इस समस्या पर सोच ही रहे थे कि हवाई जहाज की घरघराहट जैसी तेज आवाज सुनाई पडी। देश-विदेश से सान्ताक्रूज़ के हवाई-अड्डे पर शाम को जो विमान आते है, यह आवाज उन्ही की होगी, ऐसा सोचकर लता और दिलीप ने आकाश की ओर देखा। प्रोफेसर ने हँसकर कहा—'बुद्धू बन गए न तुम दोनो! वह हवाई जहाज नही है। सामने के फूल पर कुछ बर्रें गुजन कर रही है।"

तीव्रता से पख फडफडाती अनगिनत बर्रों के काले और

पीले रग, शाम की धूप मे शोभित हो उठे थे। पौधे पर कई फूल खिले थे। सुनहले और श्याम रग की बर्रे उनमे से रस चूस रही थी। रस चूसने के बाद वे उसी लाल झण्डी की दिशा मे उड-उडकर जा रही थी। प्रोफेसर ने यह सब ध्यान से देखा। सहसा उन्हे एक अनोखा उपाय सूझा। वह बोले—"तुम दोनो अभी किसी विमान की खोज कर रहे थे न? अब हम विमान मे ही बैठकर उस झण्डी वाले टीले पर उतरेगे।"

बच्चे अचरज मे डूबकर बोले—"क्या कहते है आप? विमान कहा है?"

"देखो, सामने फूलो पर विमान मडरा रहे है।"

लता घबराकर बोली—"बर्रे? आपका मतलब है कि हम बर्रे पर सवार होकर उडेगे?"

दिलीप बोला—"हरगिज नही! अब तक हम ईश्वर की कृपा से अनेक मुसीबतो से बचते आए है। अब बर्र के सामने जाकर क्या उससे मौत मागनी है?"

प्रोफेसर ने कहा—"तुम्हारा शक गलत है। मै खतरो को बुलाने की नही, बल्कि सभी खतरो को पार कर जाने की बात कर रहा हू।"

"वह कैसे?" दिलीप ने पूछा।

"यदि हम पैदल चलेगे, तो कम-से-कम एक सप्ताह और लगेगा। रास्ते मे हजारो खतरो का भी सामना करना पडेगा। कोई कीडा हमे खा सकता है, कोई गुबरैला हमे धूल मे दबा सकता है। कोई इल्ली ही हमे कुचल दे या कोई पतगा हमे चाई मे दबा दे। ऐसे अनगिनत जोखिम इस जगल मे है। इनसे बचाव यदि हम बर्रे पर सवार होकर उडे तो क्या बुराई है?"

बच्चे यह दलील सुनकर एक-दूसरे की ओर ताकने लगे। आखिर दिलीप ने पूछा—"लेकिन अगर यह बर्र हमे खा गई तो ?"

"नही। बर्र की यह जाति केवल फूलो का रस पीती है। यदि किसी गुबरैले कीडे की इल्ली मधुमक्खी पर सवार होकर मधुछत्ते तक पहुच सकती है, तो क्या हम बुद्धिशाली मनुष्य होकर भी ऐसी सवारी नही कर सकते ?"

यह सुनकर दिलीप उत्साहित हो गया। उसने पूछा—"किसकी इल्ली मधुमक्खी पर सवार होकर उडती है ?"

"तुमने देखा होगा कि कभी-कभी हमारे शरीर पर बडे-बडे छाले पड जाते हैं। उस समय यह कहा जाता है कि मकडी पेशाब कर गई। कोई कहता है कि साप की लार छू गई। असल मे उस छाले का कारण एक प्रकार का एक गुबरैला कीडा होता है। रोशनी से आकर्षित होकर ये कीडे घर मे आते है। उनके पैरो के जोड मे से एक प्रकार का दाहक रस झरता है। यदि वह रस हमारी चमडी को छू जाए तो फफोले उठते हैं। जब मैं छोटा था, तब मेरी कमर पर ऐसे बहुत से फफोले उठे थे। इतनी जलन हुई थी कि उन दुष्ट कीडो को मैं आज तक नही भूला हूँ। इस जाति के गुबरैले कीडो की इल्ली मधुछत्तें मे शहद खाने पहुच जाती है। बताओ, मधुछत्ते तक उसे कौन ले जाता है ?"

"उसकी मा।"

"नही, नही, बिलकुल नही ! कीडो की सृष्टि मे कुछ अपवादो को छोडकर कोई भी कीडा अपने मा-बाप को नही पहचानता। अकसर तो यही होता है कि मा अण्डे देकर मर

जाती है। अण्डो से इल्लिया निकलकर फूल के पौधो पर चढ़ती है और फूल मे छिप जाती है। जब मधुमक्खी फूल का रस लेने आती है, तब यह इल्ली उससे चिपक जाती है। चिपकने के लिए कुदरत ने उसे पजे भी दिए है। मधुमक्खी के साथ उडकर वह मधुछत्ते मे पहुचती है और छत्ते का शहद खा जाती है। एक बेवकूफ इल्ली जब ऐसा कार्य कर सकती है तो क्या हम जैसे साहसी मनुष्य ऐसा काम न कर सकेंगे ?"

"परन्तु वर्र "

प्रोफेसर ने बीच मे ही दिलीप को रोककर कहा— "इससे डरने की कोई जरूरत नही है। वर्र को जरा भी शक न होगा। हम उस पर ऐसी जगह चिपकेंगे कि यदि वह गुस्से मे आकर डक मारना भी चाहेगी तो न मार सकेगी।"

अब लता ने दलील की—"लेकिन यदि वर्र हमे किसी गलत दिशा मे ले जाकर दूर उडा ले गई तो ?"

प्रोफेसर ने उसके बढिया सवाल की तारीफ करते हुए कहा— "इस बारे मे मैने पूरी जाच कर ली है। हमे जहा जाना है, वही इस वर्र का घर है, यह मैने अच्छी तरह देख लिया है।"

रहना। जव मैं इशारा करू तो उससे चिपक जाना।"

दिलीप को वर्र के विपय मे जिज्ञासा हुई। उसने पूछा—"वर्र का घर कैसा होता है?"

प्रोफेसर ने कहा—"दुनिया मे कम-से-कम दस हजार जाति की वर्रें पायी जाती है। इनमे से अधिकाश शिकारी होती हैं। वे एकान्त जीवन विताती हैं और कीडे खाती है। कुछ वर्रें मधुमक्खी की तरह समूहचारी भी हैं। वे झुण्ड मे रहती और घर वनाती है। एकान्त जीवन विताने वाली वर्रें मिट्टी के घर मे या किसी तने या डाली मे छेद करके रहती है। भौंरा छेद मे ही रहता है। समूह मे रहने वाली वर्रें कागज का घर वनाती है।"

"कागज का घर?" लता वोल उठी।

"हा, कागज का। मनुष्य ने कागज बनाना सीखा, उससे लाखो वर्ष पूर्व वर्र कागज बनाना जानती थी!"

"वह कैसे?"

"यह तो तुम जानते ही हो कि वृक्षो की लुगदी से कागज तैयार किया जाता है। कश्मीर मे तो इस लुगदी से वर्तन, डिब्बिया आदि तरह-तरह की सुन्दर, उपयोगी वस्तुए भी बनाई जाती है। बर्र भी मुह से लकडी का टुकडा काटती है और उसे चबाकर लुगदी वनाती है। फिर उसमे अपना चिकना थूक मिलाती है। इस प्रकार मक्खन जैसी चिकनी और मुलायम लुगदी वनाकर वह उससे अपना घर तैयार करती है। किसी भी औजार के बिना, केवल मुँह और पैर से वह ऐसा सुघड और सुडौल घर बनाती है कि कोई भी देखता रह जाए।"

"वाह ! एक क्षुद्र कीडे मे कितनी योग्यता और चतुराई है ! उसका घर क्या मधुछत्ते जितना बडा होता है ?"

"नही, वह छोटा होता है। फूलो मे से वर्र जो शहद और पराग इकट्ठा करती है, वह केवल उसके बच्चो के लिए पर्याप्त होता है। अत हम वर्र के घर मे से शहद नही पा सकते ..."

प्रोफेसर की बात अधूरी रह गई। कारण—किसी वर्र की गुनगुनाहट सुनाई दी थी। वह नजदीक आ रही थी। विशाल वर्र उसी फूल पर उतरी। रस चखने के लिए वह फूल के अन्दर घुसी। विमान जैसे पख, विकराल मुह और बारीक बालो से आच्छादित उसका शरीर देखकर लता और दिलीप डर गए। उन्होने कबीर चाचा की ओर देखा। चाचा के चेहरे पर भय की छाया भी न थी। चाचा का इशारा होते ही दोनो बच्चे वर्र के बारीक बाल पकडकर चिपक गए।

चाचा चिल्लाए—"होशियार ! खबरदार ! सावधान !"

चाचा भी वर्र के बालो से चिपक चुके थे।

दूसरे ही क्षण वर्र के पख फैले और गूजने लगे। तीनो ने जब नीचे देखा, तो वहा फूल नही था। गड्ढे टेकरिया नदिया और जगल पार करते हुए वे उड रहे थे। बच्चो को याद आया कि वे अपने घर की खिडकी मे से फुर्दी की पीठ पर सवार होकर इसी प्रकार उडे थे। उस समय दिलीप डर गया था, पर आज उसे डर नही था। प्रोफेसर साथ जो थे।

... खर्राटे मार रहा था। वर्र के पख ... **बहादर**

भाति गूंज रहे थे। वे इतनी तीव्रता से फडफडा रहे थे कि दीखते भी न थे। वर्र पहले तो काफी ऊचे चढी। मधु-मक्खिया और वर्र दिशा ज्ञात करने के लिए पहले ऊचे चढती हैं। सहसा वर्र को इन तीनो मुसाफिरो का भार महसूस हुआ। वह उन्हे फेंक देने की चेष्टाए करने लगी। प्रोफेसर चिल्लाए-"गिरना मत! बराबर चिपके रहो!"

पखो के गुजन और पवन के सपाटो की आवाज मे प्रोफेसर की चिल्लाहट डूब गई। उन्हे भय था कि शायद लता के बधे हाथ छूट जाए और वह पृथ्वी पर जा पडे। दिलीप को भय लग रहा था कि अगर यह विमान बीच मे उतर गया, तो बाकी रास्ता उन्हे पैदल तय करना पडेगा।

वर्र बडे असमजस मे थी। वह गोल-गोल चक्कर खाने लगी, दाए-बाए को झुकने लगी, लेकिन अपने मुफ्त के मुसाफिरो को नीचे न गिरा सकी। आखिर उसने हवा मे एक जोरदार डुबकी लगाई। नीचे की धरती बडी तेजी से ऊपर आने लगी। तीनो यात्री सहसा इतने घबरा गए थे कि वे कहा है और नीचे क्या है, यह भी नही देख सकते थे। वर्र की इस डुबकी से उनकी आखो के सामने अँधेरा छा गया। कान के पास पवन ऐसे सपाटे मार रहा था, मानो कान के पर्दे अभी फट जायेंगे। प्रोफेसर की दाढी और लता और दिलीप के बाल, तूफान मे किसी कागज की झण्डी की तरह फडफडा रहे थे।

विमान मानो हवाई-अड्डे पर उतरा हो, इस तरह वर्र किसी गोल चिकनी वस्तु पर धव्व करती हुई उतरी। उसका प्रचण्ड वेग अचानक रुक जाने से साहसी वीरो को ऐसा धक्का

लगा कि वे उछलकर नीचे गिर पड़े। वजन कम होते ही बर्फ झपाटे से उड़ गई। साहसी वीर न मालूम कितनी गुलाटें खा गए। सौभाग्यवश वे किसी कठोर हवाई-अड्डे पर नहीं, वरन् रुई जैसी मुलायम धरती पर गिरे, जिससे किसी को चोट नहीं लगी।

बड़े तो हो गए लेकिन

पहले प्रोफेसर सावधान हुए। उन्होंने सोचा कि यह गीली और मुलायम जमीन कैसी है! बादल-सा रंग और बादल-सी मुलायम! उन्होंने खड़े होकर देखा तो पता चला कि इस जमीन के बीच में एक नहीं वरन चार-चार गोल, चमकदार और कठोर हवाई-अड्डे हैं। यह भी आश्चर्य की बात थी। जिस प्रकार अँधेरे में नींद से जागा हुआ मनुष्य भूल जाता है कि वह कहाँ है, उसी प्रकार प्रोफेसर कबीर असमंजस में पड़ गए। बल्ब जलाने पर जिस तरह अचानक सब स्पष्ट हो जाता है, उसी तरह प्रोफेसर को भी स्पष्ट याद आने लगा—ये हवाई-अड्डे नहीं, वरन बटन हैं—और वे भी परिचित बटन! उन्होंने आँखें झपकाकर आसपास देखा। अरे, जिस वस्तु के ऊपर वे तीनों गिरे थे, वह तो उनकी कमीज थी, जिसे प्रोफेसर ने उस जादुई शर्बत को पीने के तुरन्त बाद उतार फेंका था।

हर्ष और उत्साह से उत्तेजित होकर प्रोफेसर चीख उठे—"वाह! दिलीप! हम ठीक अपनी मंजिल पर आ पहुँचे हैं।

यह वही कमीज है, जिसे मैंने उतारकर फेक दिया था।"

गिरने से आयी चोट से बेहोशप्राय बच्चे यह खुशखबरी सुनकर गेंद की तरह उछले। वे अधीर होकर बोले—"तो फिर बडे होने के रसायन की पेटी कहा है ?"

प्रोफेसर ने चारो ओर आखें घुमाई। कहा है वह झण्डी ? झण्डी कही नही थी। वह घबरा गए। क्या पेटी को कोई उठाकर ले गया ? यदि ऐसा ही हुआ है तो फिर बडे होने की आशा समाप्त समझो। धडकते हृदय और चिन्तातुर आँखो से उन्होने फिर सब जगह दृष्टि घुमाई। सहसा वह उत्साह से बोल उठे—"थोडी देर पहले ही वह लाल झण्डी गिर गई लगती है। वह पेटी यही होनी चाहिए—मैंने उसे इसी घास के जगल मे छिपाया था।"

विशाल कमीज की सतह पर गिरते-पडते वे तीनो अधैर्य से दौडे। कमीज से नीचे घास का जगल था। वे उसमे घुसे। वहा एक विशाल पेटी पडी थी।

"विजय ! विजय ! साहस और विज्ञान की विजय ! मुसीबतें खत्म हुईं। हमने सफलता पा ली। यदि हम डरे होते, यदि हम बर्र पर सवार होकर न उडे होते, तो शायद हम कभी यहा तक न पहुचते, क्योकि निशानी की लाल झण्डी अभी-अभी गिर गई है। हम कितने भाग्यशाली हैं ! लेकिन भाग्य भी बिना बुलाए नही आता। उसे प्राप्त करने के लिए बहादुरी से दौडना और लडना पडता है।" प्रोफेसर कबीर कहते जा रहे थे।

बच्चे प्रोफेसर की भव्य आकृति और दिव्य वाणी से बहुत प्रभावित हुए। प्रोफेसर ने अपनी दाढी सहलाते हुए कहा—

"इस पेटी के पास हमारी बहादुरी की कसौटी समाप्त होती है। अब हम अपने पूर्वजीवन की, अपनी विशाल दुनिया की दहलीज पर खडे है। तुमने इतने दिनो मे बहुत-कुछ देखा और जाना है, पर यदि सच पूछो तो तुमने प्रकृति के विशाल साम्राज्य का एक नन्हा-सा कोना ही देखा है। तुमने एक विशाल ग्रन्थ का मुखपृष्ठ मात्र देखा है। जब तुम ज्ञान के इस अनन्त प्रदेश मे अधिक घूमोगे, तुम्हे ईश्वर की अद्भुत सृष्टि का और अधिक परिचय प्राप्त होगा। इस सृष्टि मे हमारे मित्र है, शत्रु भी है। हमे उन्हे पहचानना आना चाहिए।"

"क्या हम फिर से यहा आएगे ?" दिलीप ने उत्साह से पूछा।

'जरूर आएगे। पर इस जादुई शर्बत को पीकर, क्षुद्र जन्तु बनकर नही। हम सूक्ष्मदर्शक यन्त्र, रसायन, पुस्तको तथा अन्य वैज्ञानिक साधनो से सज्जित होकर आएगे। अभी सबसे पहले हमे घर पहुचना है। उसके बाद, इत्मीनान से हम अपनी योजना बनाएगे। अभी तो हमे इस पेटी मे रखा हुआ शरबत पीकर बड़ा हो जाना है। इसके बिना हम घर नही पहुचेगे।'

घर! प्यारा घर! शान्ति और प्रेम का मन्दिर! अम्मा और दिलीप को मा याद आयी। पिताजी याद आए। घर! घर!

ऊपर केले के पत्ते का टुकडा है। उसे हटाकर प्याले मे उतरना और उस रसायन को खा लेना। तुरन्त तुम पहले जितने वडे हो जाओगे।"

दिलीप झटपट पेटी पर चढने लगा, लेकिन उसी समय भीतर कुछ आवाज हुई। दूसरे ही क्षण उस खिडकी मे मे कोई वाहर निकला।

"अरे, यह पतगा यहा कहा से आया ?" प्रोफेसर आश्चर्य से वोल उठे।

लता और दिलीप ने देखा कि प्रोफेसर ने इतनी अधिक उत्सुकता कभी नही दिखाई थी। प्रोफेसर ने इस इलाके के तमाम पतगे, तितलिया और अन्य कीडे इकट्ठे किए थे। उनकी प्रयोगशाला मे इसका एक सुन्दर सग्रहालय ही बन गया था। पर यह छोटा-सा पतगा उनके पास न था। प्रोफेसर आश्चर्य और आनन्द से बोल उठे—"आश्चर्य! मैंने तुझे हिमालय मे देखा था, मैं तुझसे नीलगिरि मे भी मिला था, पर तू इस प्रदेश मे कहाँ से आया? तू तू अरे, जाता कहा है? कहा जाएगा "

उड जाने को तैयार पतगे पर प्रोफेसर पूरी ताकत से टूट पडे। दोनो मे तुमुल युद्ध होने लगा। लता और दिलीप को लगा कि पतगा या तो प्रोफेसर को उठाकर उड जाएगा या उन्हे मार डालेगा। वे भी पतगे को परास्त करने मे प्रोफेसर की मदद करने लगे। पवन के सपाटो और शाम की सुनहरी धूप मे इन तीन योद्धाओ और पतगे मे घोर सघर्ष होने लगा। आखिर पतगे की हार हुई। प्रोफेसर उसकी गर्दन दबाकर वैठ गए। फिर उन्होने हाँफते-हाँफते कहा—"इस दुर्लभ पतगे को

मुझे अपनी प्रयोगशाला मे जिन्दा ले जाना है। तुम दोनों पेटी मे घुसकर रसायन खा लो, फिर बडे होकर यहा आओ। इसके बाद तुम पतगे को पकड रखना और मैं भीतर जाकर रसायन खा लूंगा, ताकि बडा हो सकू।"

पतगे की गर्दन पर सवार विजेता और विद्वान प्रोफेसर की भव्य आकृति बच्चे देखते रह गए। प्रोफेसर की दाढी फरफरा रही थी। शाम की धूप मे उनके मुख पर विजय का तेज चमक रहा था।

बच्चे खुश होते हुए उस खिडकी की राह पेटी मे घुस गए। रोशनी मे से भीतर जाने के कारण बच्चो को कुछ देर तक अन्धकार मालूम हुआ, परन्तु कुछ ही मिनटो मे उनकी आखे अँधेरे मे देखने की आदी हो गई। छेदनुमा खिडकी से रसायन की प्याली पर धूप पड रही थी। प्याली पर ढके पत्ते का टुकडा सूख गया था। उसके नीचे से प्याली मे पहुंच कर जाने मे बच्चो को कोई तकलीफ न हुई। पेटी मे पहुंच रही धूप इन्द्रधनुष के सात रगो मे फट गई थी। उसमे पडा रसायन भी सुनहरा-रुपहला लग रहा था। उस सतरगी रोशनी मे वे बच्चे मुट्ठी भर-भरकर रसायन खाने लगे।

मे ही घुट जाएगे !"

लेकिन तब तक देर हो चुकी थी। बडे हो रहे बच्चो के भार से वह प्याली लुढक गई और सारा रसायन गिर गया। बच्चे गुलाट खा गए। ज्यो ही वे खडे हुए, उनके सिर पेटी की छत से जा टकराए। असमजस मे पडकर वे समस्या का हल खोज ही रहे थे कि उनके बढते हुए शरीर के कारण पेटी टूट गई। देखते-ही-देखते बच्चे पहले जितने बडे हो गए। उन्होने आखें झपकाकर देखा कि कुछ ही मिनट पहले जो घास ताड के समान मालूम पड रही थी, वही अब उनके घुटनो से भी नीची थी। जो वृक्ष हिमालय-से मालूम पड रहे थे, वे अब अपने साधारण आकार मे सिमट गए थे। जो कीडे उन्हे हाथी और गेंडे-से प्रतीत होते थे, वे अब पैरो से कुचले जा सकते थे। ओह, कैसा जादू ! जादूगर कबीर का जादू !

अँधेरी पेटी मे से अचानक बाहर की रोशनी मे आने से चौंधिया गईं आखो पर हथेलिया रखता हुआ दिलीप बोला—"लता, तू जहा है, वही खडी रह। चाचा अभी मकोडे जितने ही हैं। हमारे चलने से यदि वह पैरो तले आ गए, तो कुचले जाएगे !"

यह सुनकर लता भी घबरा गई। तभी एक और आफत का सामना करना पडा। जोरदार पवन के कारण वह रसायन उड गया—सारा का सारा उड गया ! प्रोफेसर के लिए जरा भी न बचा। लता यह देखकर और अधिक घबरा गई। वह रोनी-सी होकर बोली, "हाय, हाय, भैया ! कबीर चाचा के लिए तो रसायन जरा भी न बचा। अब हम क्या करेंगे ?"

दिलीप भी घबरा गया—"हे भगवान ! अब क्या होगा ?

क्या प्रोफेसर सारी जिन्दगी मकोड़े जितने ही बने रहेंगे ?"

कोई नैया महासागर तो पार कर जाए, लेकिन किनारे आकर डूब जाए, बिल्कुल ऐसा ही हुआ था। लता रोने लगी। दिलीप बोला—"बहन, रोने से कुछ नहीं होगा। हमें मुसीबत से लड़ना सीखना चाहिए। मुझे प्रोफेसर से, उनकी बुद्धि और विद्या में अपार श्रद्धा है। हमें उन्हें आज [illegible] चाहिए। सम्भव है कि उड़ते रसायन में से उन्होंने कुछ [illegible] लिया हो। हम जरा भी चले-फिरे बिना इस पास में [illegible] खोज करें।"

वे उकड़ू बैठ गए। लता ने चिल्लाकर पुकारा, 'प्रो-फे-स-र!"

दिलीप बोल उठा—"अरे! अरे! तेरी आवाज [illegible] प्रोफेसर के कान के पर्दे फट जाएंगे! उन्हें तो हल्की, [illegible] मधुर आवाज से पुकारना चाहिए।"

प्रोफेसर कहीं भी दिखाई नहीं पड़ रहे थे। [illegible] छायी हुई थी। दिलीप ने टूटी हुई पेटी का एक पट्टा उठा [illegible] और [illegible] को अच्छी तरह जांच करके नीचे [illegible]। फिर हल्के, मधुर स्वर में पुकारा—"प्रोफेसर चाचा, [illegible] है? इस पट्टे पर आइए न! क्या आप मेरी [illegible] सुनते हैं?"

प्रोफेसर कुछ कह रहे थे। बच्चो को कुछ भी सुनाई नही पड रहा था। अचानक प्रोफेसर फट्टे से उतरकर घास मे अदृश्य हो गए।

बच्चे असमजस मे पडे कि अब क्या करे? लता आश्चर्य से बोली—"कबीर चाचा कितने छोटे दिखते है! नन्हे मकोडे जितने।"

दिलीप ने कहा—"दस मिनट पहले हम उनसे भी छोटे थे।"

"लेकिन अब क्या करें? चाचा कहा चले गए?"

"हम यहा से ज़रा भी खिसकेंगे तो उन्हे पैरो-तले कुचल डालेंगे और हमे पता भी न चलेगा। बेहतर यही है कि हम उनकी राह देखे।"

थोडी देर मे फट्टे पर फिर हलचल हुई। वह रहे प्रोफेसर! इस बार वह अकेले नही थे। साथ मे वह पतगा भी था। शक्ति वापस आ जाने से पतगे ने प्रोफेसर को पटक दिया था। प्रोफेसर फिर उससे युद्ध कर रहे थे। इस बार प्रोफेसर उसे फट्टे पर घसीट लाए और वही युद्ध करने लगे।

दिलीप बोल उठा—"हमे प्रोफेसर की मदद करनी चाहिए, वरना यह पतगा उन्हे खा जाएगा।"

मदद करनी चाहिए! यह भी कैसी बात है! चुटकी मे मसल दिया जाए, ऐसे पतगे से प्रोफेसर को बचाने के लिए मदद करनी चाहिए। प्रोफेसर के साथ मल्लयुद्ध करते पतगे का एक पख पकडकर दिलीप ने उसे उठा लिया। प्रोफेसर कबीर दिलीप के सामने आकर उत्तेजना से कुछ बोलने लगे।

अपराधी की तरह दबी हुई आवाज मे दिलीप ने कहा—

"चाचा ! उसमें हमारा कोई कसूर नहीं है। [illegible] हवा में उड़ गया। बताइए, अब हम क्या करें?"

प्रोफेसर ने जोर से हाथ और सिर हिलाया। [illegible] कहने लगे। लता बोली—"भैया, कबीर चाचा [illegible] और ही बात कह रहे हैं।"

दिलीप ने सहानुभूति से कहा—"पतंग ने [illegible] घायल कर दिया है। मगर चिन्ता न करें। [illegible] कर उसे फेंक दिया है। अब वह आपको [illegible] कोई नुकसान न पहुंचा सकेगा।"



प्रोफेसर ने उत्तेजना से हाथ उठा-उठाकर कुछ कहना चाहा। जैसे किसी गहराई से चूं-चूं की आवाज आयी हो, बच्चो ने बस इतना ही सुना। दिलीप ने कहा—"आपको बदला लेना है, तो अभी मैं पतगे को खोजकर मसल डालूं—आपकी नजरो के सामने !"

यह सुनकर तो प्रोफेसर और अधिक उत्तेजित हो गए। लता ने कहा—"प्रोफेसर चाचा कुछ और ही कह रहे है। आप अपनी ही रट लगाए हुए हैं।"

दिलीप ने प्रोफसर के आस-पास दोनो हथेलियो से गोल किला रचकर, ऊपर अपना कान रखा, ताकि प्रोफेसर की आवाज तेज हवा मे उड न जाए। अब कुछ-कुछ सुनाई दिया। दिलीप ने प्रोफेसर की क्षीण आवाज सुनी—"मुझे रसायन की चिन्ता नही है। मुझे तो वह अनोखा पतगा चाहिए ! मे उसे जिन्दा ही घर ले जाना चाहता हू। किसी भी तरह उसे खोज निकालो। मेरी चिन्ता न करो।"

यह प्रोफेसर भी अजीब है ! जिन्दगी भर मकोडे-जितना छोटा रहना पडेगा, इसकी उन्हे चिन्ता नही है। एक क्षुद्र ाेड मर जाए या गुम जाए, इसकी उन्हे चिन्ता है ! विज्ञान के पीछे वह पागल हो गए है।

हा, पागल ! ऐसे पागलपन के बिना, ऐसी एकाग्रता और तपस्या के बिना ज्ञान नही मिलता। ज्ञान के लिए प्रेम चाहिए, मेहनत चाहिए, त्याग चाहिए।

बडी मुश्किल से दिलीप ने वह पतगा खोज निकाला और पकड लिया। अभी वह जिन्दा था। दिलीप ने पूछा—"कबीर चाचा ! क्या आप जिन्दगी भर इतने ही रहेगे ?"

दिलीप की आवाज भर आयी थी। लता भी र
उठा रही थी।

"नहीं, बच्चो!" प्रोफेसर कबीर ने कहा, '
पत्ते को कुप्पी की तरह मोड लो। मुझे उनमें
इस पतंगे के पैर और पंख बांध दो। पतंगे का भी
कुप्पी में रख दो। कुप्पी को सावधानी से उठाकर
तरफ चलो।"

"लेकिन चाचा, क्या आप इतने ही छोटे र ।'
लता ने फिर पूछा।

"नहीं, बिटिया! मैं बडा हो जाऊँगा।" प्रो ।
'बडे होने का रसायन मैं अपनी प्रयोगशाला में भी
है। मुझे सकुशल प्रयोगशाला तक पहुंचा दो। ।
रसायन खाऊँगा, बडा हो जाऊँगा।"

यह सुनकर दोनों बच्चों की खुशी की सीमा
उन्होंने एक हरा पत्ता तोडकर उसे कुप्पी की तर
फिर इस 'हरे महल' में प्रोफेसर कबीर को नजाकत
भर बिठा दिया। पतंगे के पंख और पैर बांधने के
ने जमीन पर पडी प्रोफेसर कबीर की कमीज में से
ोच निकाले। कैदी पतंगे को भी उन्होंने कुप्पी में र
कुप्पी दिलीप ने उठा ली। प्रोफेसर कबीर ने रास्ते
ोंना ने उन्हें रास्ते की जानकारी दे दी।

घर पहुंचने पर हंगामा

लता ने दिलीप से कहा—"भैया! एक बात तो हम भूल ही गए। छोटे से बडे होने के कारण हमारी रेशमी पोशाक फटकर गिर गई है। शहर मे जाने से पहले हमे कुछ कपडे पहन लेने चाहिए।"

अब दिलीप को भी याद आया कि उसने भी कोई कपडा नही पहना है। पन्द्रह दिन पहले प्रोफेसर ने अपनी कमीज और पतलून घास मे फेंक दी थी। दिलीप ने कमीज लता को दी और पतलून खुद पहन ली। मोहरिया मोडने के बाद भी पतलून उसके गले तक आयी। दिलीप ने कन्धे पर पतलून के बटन और पेटी बाध ली। प्रोफेसर की कमीज लता के घुटनो से भी नीचे तक आयी। उसने कमीज की बाहे चढाकर छोटी कर ली।

अपने विचित्र कपडे देखकर लता और दिलीप खिलखिला उठे। लता बोली—"दिलीप भैया! हम कैसे दीखते है?"

"चिडियो को डराने के लिए खेत मे घासफूस का जो आदमी खडा करते हैं न, वैसे!"

दोनो फिर खिलखिलाकर हँस पडे और कुप्पी उठाकर तेजी से चल दिए। सूर्य डूबने लगा था। जब वे पगडण्डी पार करके पवई सरोवर के रास्ते पर आए, तो बिलकुल शाम हो चली थी। पिकनिक पर आए लोगो की कारे वापस घर जा रही थी। वे इन बच्चो का वेश देखकर हँसने लगे, लेकिन बच्चो को उनकी परवाह न थी। वे अपने घर की ओर झपट रहे थे।

दिलीप ने हाफते हुए लता से पूछा—"मा इस समय क्या कर रही होगी ?"

"रसोई बना रही होगी । पिताजी के आने की राह देख रही होगी ।"

दिलीप ने निश्वास छोडकर कहा—"तू नादान है, लता ! जो मा अपने दोनो बच्चे खो बैठी हो, उसे पकाना-खाना भला कहा अच्छा लग सकता है ? पिताजी की भी यही तो हालत होगी । बच्चे जब बडे हो जाते है, तभी उन्हे मालूम होता है कि बचपन की नादानी से उन्होने अपने मा-बाप को कितना दुख दिया था ।"

सुनकर लता की आखो मे आसू आ गए । वह बोल उठी—'अब हम कभी उन्हे दुखी नही करेगे । मुझसे नही रहा जाता । चलिए, दौड लगाए !"

वे दौड पडे । कुछ आवारा छोकरे एक पिल्ले के साथ खेल रहे थे । लता और दिलीप को दौडते देखकर और उनकी विचित्र पोशाक से भडककर वह पिल्ला भौंकता हुआ उनके पीछे दौडा । पिल्ले के पीछे वे आवारा छोकरे भी 'हो-हो' करते हुए दौड पडे । पिल्ले के काटने के डर से दिलीप ने एक पत्थर उठाकर मारा । पिल्ला चीखता हुआ भागा । अब इन लडको ने लता और दिलीप को घेर लिया और सताने लगे ।

गुण्डे उन पर हमला करेंगे, तो सबसे पहले शिकार बेचारे प्रोफेसर हो जाएगे। उसने हरे पत्ते की कुप्पी को बचाने के लिए हाथ उठा दिया। उन आवारा लडको ने शाम के धुधलके मे यह नही देखा कि दिलीप के हाथ मे क्या है। वे यही समझे कि दिलीप ने लडने की चुनौती दी है। तुरन्त वे आगे बढे। एक छोकरे ने कहा—"मेरे खेत से दो घासफूस के आदमी भाग गए है!"

दूसरे बच्चे खिलखिलाकर हँसने लगे। एक ने कहा—"छोडो भी यार, ये दोनो पागल हैं।"

दूसरे भी 'पागल-पागल' चिल्लाते और हँसते हुए अपनी राह चले गए। भाई-बहन ने छुटकारे की सास ली। लता ने कहा—"जगल मे कितने ही राक्षसो ने हम पर हमला किया था, पर उनसे भी दुष्ट और भयकर तो मुझे ये गुण्डे लगे।"

"तेरी बात सच है, बहन! कुछ बच्चो के मन मे शिष्टता, विवेक या विद्या के लिए प्रेम या सम्मान नही होता। वे हर कार्य ऐसा करते हैं, जिससे दूसरो का नुकसान हो। इस प्रकार वे फूल के बदले काटे बन जाते हैं।"

थोडी ही देर मे वे नए बने मकानो के बीच आ पहुचे। पन्द्रह दिनो की अनुपस्थिति के बाद वह सुपरिचित बस्ती भी उन्हे नई मालूम हुई! वह रहा उनका घर! घर की खिड-कियाँ सूनी है। भीतर रसोईघर मे बत्ती जल रही है। बच्चे नीचे से चिल्लाए—"मा! पिताजी!"

रसोई बना रही मा चौक उठी।

'यह कौन बोला?' भ्रम! भ्रम! दुख के कारण पागल-सी हो चुकी मा ने सोचा, 'यह कैसा भ्रम है!'

"मा ! हम आ गए !"

'फिर यह कौन बोला ? पडोसी के बच्चे होगे ।' मा ने दुख से एक सास छोडी । पिताजी के आने का समय हो गया था । मा खिडकी के पास आयी ।

सीढी पर किसी के चढने की आवाज सुनाई दी । किसी ने बन्द दरवाजे खटखटाए—"मा ! मा ! पिताजी !"

'अरे, ये कौन ? आवाज तो दिलीप और लता जैसी है !' मा तूफान की तरह दौडी । उसने दरवाजे खोले । बच्चे तुरन्त अन्दर आ गए । हर्ष से पागल होकर मा उनसे लिपट गई और रोने लगी । बच्चो के सिर मा के आसुओ से भीगने लगे ।

दिलीप बोला—"मा, मेरा हाथ ! मेरी कुप्पी ! उसमे कबीर चाचा है । मुझे छोड दे, मा, तू उन्हे मसल देगी ! मुझे चाय का एक कप दे । मैं उसमे कबीर चाचा को बिठा दूगा । चाय मे एक अनोखा पतगा भी है !"

मा को ये बातें बडी विचित्र लगी । दिलीप ने छूटने का प्रयास किया । मा ने उसे छोड दिया और बैठक की बडी बत्ती जलाई । उसने जब बच्चो की विचित्र पोशाक देखी और उनकी विचित्र बाते भी सुनी तो उसे निश्चय हो गया कि दोनो भाई-बहन पागल हो चुके है ।

'हे भगवान ! पन्द्रह दिन बाद बच्चे वापस मिले भी है तो पगले !" मा सिर पीटने लगी ।

दिलीप ने कहा—"नही, मा ! हम पागल नही है । मुझे चाय का प्याला दे दो । मैं उनमे कबीर चाचा को बिठा दू !"

मा दुख और निराशा से तुनक उठी—'उस मुए जादूगर कबीर [illegible] सत्यानाश कर डाला । मेरे फूल-जैसे बच्चो

को वही उठा ले गया था। अब इन्हे पागल बनाकर भेज दिया और खुद भाग गया है "

'नही ! वह भागे नही हैं। कबीर चाचा तो मा, देवता है देवता ! हमे उन्होने ही बचाया है। अब हम उन्हे बचाएगे। हमे तू चाय पीने का एक कप दे तो सही। हम उसमे कबीर चाचा को बिठाए।" लता ने कहा।

ऐसी बाते सुनकर मा को पक्का निश्चय हो गया कि बच्चे जरूर पागल हो गए है। उसने तुरन्त फोन उठाया—"हलो, हलो, डाक्टर साहब है या नही ? उफ ! नही है !"

दिलीप ने मा के हाथ से फोन लेते हुए कहा—"मा ! हमे डाक्टर की नही, चाय के कप की जरूरत है। हम पागल नही हुए हैं।"

मा ने सोचा कि यदि पागल मनुष्य की इच्छा पूरी न की जाए तो उसका पागलपन बढ जाता है। अत उसने 'पागल' च्चे को शान्त करने के लिए दूध-सा सफेद एक कप लाकर दिया। दिलीप ने बल्ब की तेज रोशनी के नीचे एक मेज पर रखकर कहा—"कबीर चाचा ! अब आप अपने इस रे महल' मे से 'चीनी मिट्टी के महल' मे पधारिए !"

दिलीप ऐसा विचित्र खेल पागलपन के कारण ही कर रहा है, मा को यही लगा। फिर भी उत्सुकता से उसने देखा, तो हरे पत्ते की कुप्पी मे, पतगे के बगल मे, कोई बडा कीडा हिल रहा था ! अरे, यह कीडा तो दो पैरो पर खडा होकर चल सकता है ! वह पत्ते पर से कप मे उतर भी रहा है। दिलीप ने कप मे स्वच्छ रूई का एक फाहा रखा। फिर पूछा—"प्रोफेसर चाचा, आपको किसी प्रकार की तकलीफ तो नही है ?"

कप मे से प्रोफेसर ने जो जवाब दिया, उसे घर की शान्ति मे बच्चो ने सरलता से सुन लिया, पर मा को सिर्फ चू-चू ही सुनाई दी। उसने आश्चर्य मे पडकर पूछा—"यह कैसा कीडा है?"

दिलीप को बुरा लगा। उसने कहा—"दुनिया के महान वैज्ञानिक और हमे बचाने के लिए अपनी जान खतरे मे डालने वाले वीर पुरुष को तू कीडा कहती है, मा? वह कीडा नहीं, कबीर चाचा है।"

मा को बच्चो के पागल होने मे अब कुछ भी सन्देह न रहा। उसने कहा—"अच्छा, तो मुझे भी देखने दो कि तुमने कौन-सा कीडा सरकस के खिलाडी की तरह पाल रखा है?"

उसने कप पर झुकते हुए देखा तो आश्चर्य से चीख उठी—"अरे! अरे! यह तो आदमी है।"

"केवल आदमी नही, यह है प्रोफेसर खुशालचन्द्र वीरभद्र कबीर!"

उसी समय पिताजी दाखिल हुए। बाहर से ही उन्होने [illegible] और किसी की आवाजे सुनकर समझ लिया [illegible] कि कोई-न-कोई नई बात अवश्य हुई है। बच्चो को देखकर [illegible] पागल होते हुए बोल उठे—"कौन, लता? [illegible]"

दिलीप ने कहा—"अब हमे प्रोफेसर की प्रयोगशाला से 'अभिवृद्धिकर चूर्ण' लाना चाहिए।"

पिताजी ने कहा—"लेकिन वहा तो पुलिस की सील लगी हुई है। अब यह काम सुबह ही हो सकेगा। अभी हम सब शान्ति से भोजन करने बैठ जाए। प्रोफेसर साहब खाएगे क्या ?"

दिलीप ने कहा—"हम प्रोफेसर से भी छोटे हो गए थे, अत प्रोफेसर कबीर क्या खाएगे यह हम भली-भाति जानते हैं। हम सब साथ ही भोजन करने बैठेंगे।"

दूसरे दिन सुबह पिताजी ने पुलिस कमिश्नर को खबर कर दी। वह तो सारी बाते मानने को कतई तैयार न थे। जब पिताजी ने कहा कि बच्चे प्रोफेसर के कपडे पहनकर घर आए है और नन्हे मकोडे जितने प्रोफेसर चाय के कप मे बैठे आराम फरमा रहे है, तो कमिश्नर साहब तुरन्त कार मे बैठे और आ पहुचे। सचमुच उन्होने मकोडे जितने प्रोफेसर को चाय की प्याली मे आराम करते देखा !

इस घटना की खबर बिजली की तरह सारे बम्बई शहर मे फैल गई। बम्बई के बडे-बडे विज्ञानशास्त्री, समाचारपत्रो के प्रतिनिधि और पुलिस के बडे-बडे अधिकारियो की उपस्थिति मे प्रोफेसर कबीर का मकान सील तोडकर खोला गया।

दिलीप ने कप के पास कान लाकर प्रोफेसर से सारी सूचनाए प्राप्त की। उसने उनकी प्रयोगशाला की आलमारी मे से एक छोटी शीशी निकाली, जिस पर 'अभिवृद्धिकर चूर्ण' लिखा हुआ था।

तेजस्वी आंखो, लम्बी दाढी, विद्या से प्रकाशित मुखमण्डल और विशाल काया से सुशोभित हो रहा था। पन्द्रह दिन पहले कहा जा रहा था कि प्रोफेसर कबीर एक बदमाश जादूगर है, जो बच्चो को उठाकर ले जाता है। जब प्रोफेसर पवई और विहार के जगल मे मकोडे जितने बनकर बच्चो की खोज मे भटक रहे थे, तब पुलिस उन्हे बम्बई और दूसरे शहरो मे खोज रही थी। आज सबने प्रोफेसर को एक बदमाश अपराधी के रूप मे नही, वरन एक महान सशोधक, महान वैज्ञानिक तथा एक श्रेष्ठ सज्जन से रूप मे देखा—जिन्होने दो बच्चो को बचाने के लिए स्वय अपनी जिन्दगी भयानक खतरे मे डाल दी थी।

प्रोफेसर के सम्मान मे सब खडे हो गए। फोटोग्राफरो ने उनके फोटो खीचे। कइयो ने उनके हस्ताक्षर लिए। अग्रेजी, हिन्दी, गुजराती, मराठी, कन्नड आदि प्रत्येक भाषा के और देश-विदेश के अखबारो के प्रतिनिधियो ने भी प्रोफेसर, लता और दिलीप के पराक्रमो की तथा उस जादुई शर्बत और चूर्ण आविष्कार की कहानी लिखी। उस दिन बम्बई और बडे शहरो मे समाचारपत्रो के विशेष सस्करण प्रकाशित किए गए। वे लाखो की सख्या मे विके। अखबार पढने के लिए लोगो मे छीनाझपटी हो रही थी। प्रत्येक अखबार के मुख-पृष्ठ पर प्रोफेसर कबीर, लता और दिलीप की आकर्षक तसवीरें छपी थी। उस दिन शालाए जल्दी बन्द हो गई। प्रोफेसर कबीर, दिलीप और लता को देखने के लिए चादीवली नगर मे विशाल भीड जमा होने लगी। उस दिन देश के लाखो बालको ने प्रतिज्ञा की कि हम आवारा, पढाई मे